अध्याय : 2

काव्यनाट्य परम्परा और आलोच्य नाटकों का सर्वेक्षण

अध्याय : 2

काव्यनाट्य परम्परा और आलोच्य नाटकों का सर्वेक्षण

विगत तीस वर्षों में साहित्य ने नयी जीवन दृष्टियां, काव्य की वस्तु और शिल्प संबंधी मान्यताएं पाई हैं। नये बोधों, संवेदनाओं तथा शिल्पगत प्रयोगों ने साहित्य को नई दिशा दी है। गीतिनाट्य भी एक ऐसी ही विधा है, जिसमें काव्य, नाटक और संगीत का मणिकांचन योग होता है। नाट्य, काव्य और संगीत की पावन त्रिवेणी एक रूप हो जाने के पश्चात ही सफल गीतिनाट्य का प्रणयन होता है। कृतिकार की कृति में जब यह जानना कठिन हो जाये कि इसमें काव्यतत्त्व की प्रधानता है या नाट्यतत्त्व की तभी उसे सफल कृति कहा जा सकता है। इसलिए कृतिकार इन तीनों में से किसी एक कला से भी अपरिचित हुआ तो वह उत्तम गितिनाट्य की रचना नहीं कर सकता।

गीतिनाट्य मात्र काव्य का नाटक नहीं है, अपितु मानव की रागवृत्तियों का भी उद्‌घाटक है, इसलिए गीतिनाट्यकार को मानव वृत्तियों का भी ज्ञान होना चाहिए। मन की कुंठाओं, ऐषणाओं और चित्तवृत्तियों के उद्‌घाटन में जो रचनाकार जितना सफल होगा, वह आंतरिक द्वंद्वों का चित्रण भी उतनी सफलता से कर सकेगा। गीतिनाट्य के रचियता को कहीं कहीं बहुत सावधान होना पड़ता है, कि सम्वाद सुरसा का वदन न बन जाएं कहीं भावाभिव्यक्ति बोझिल, दुरूह और नीरस न हो जाए तथा कृति का संतुलन न बिगड़ जाए।

अधिकांश गीतिनाट्य स्वातंत्र्योत्तर काल में लिखे गये हैं। इस काल में रचे गये गीतिनाट्यों को तीन चरणों में विभक्त कर सकते हैं -

प्रथम चरण - सन् 1946 ते 1955 तक,

द्वितीय चरण - सन् 1956 ते 1965 तक,

तृतीय चरण या अद्यतन चरण - सन् 1965 से अब तक।

प्रथम चरण :-

स्वातंत्र्योत्तर काल के प्रथम चरण की रचनाएं गीतिनाट्य के सभी तत्वों पर खरी उतरती हैं। इनमें काव्यत्व, नाट्यत्व और संगीतत्व एकाकार हो गये हैं। इस युग की रचनाओं का प्रधान विषय युध्द और तज्जनित परिणाम हैं। इनमें जीवन के प्रति अनास्था और कुंठाओं का वर्णन हुआ है।

प्रथम चरण में प्रयोगवादी लेखकों की रचनाएं दृष्टव्य हैं, जो शैली और शिल्प को लेकर नवीन प्रयोग कर रहे थे। नई कल्पनाओं और उद्‌भावनाओं को सृष्टि कर रहे थे। सामान्यतः गीतिनाट्य में स्थापना अंतराल और समापन नहीं होते, किन्तु इस काल के कृतिकारों ने इनका सफल प्रयोग किया है। इसी प्रकार काव्य बिम्बों और उपमाओं में अत्याधुनिक शब्दों का सफल प्रयोग किया है। अभिनेतया इस काल के नाटकों की प्रमुख विशेषता है। वे कल्पना के मनोरम संसार में विचरण तो करते हैं, किन्तु यथार्थ की कठोर पृष्ठभूमि पर समस्याओं का समाधान ढूंढते हुए। इस काल के नाटकों पर रेडियो शिल्प का बहुत प्रभाव पड़ा है। मंचीय नाटकों को आपेक्षित परिवर्तन के साथ रेडियो पर भी प्रसारित किया गया है। इसलिए जहां छायावादोत्तर गीतिनाट्य भावगीतिनाट्य कहे जा सकते हैं वहां स्वातंत्र्योत्तर गीतिनाट्य ध्वनिगीतिनाट्य कहे जा सकते हैं।

इस काल के नाटकों पर रेडियो शिल्प का बहुत प्रभाव पड़ा है। शिल्प के क्षेत्र में भी इस काल के गीतिनाट्य अपना महत्त्व रखते हैं। शिल्प के क्षेत्र में उल्लेखनीय बात मुक्त छंद का प्रयोग है। साथ ही वृत्तगंधी गद्य का प्रयोग कर लेखकों ने सराहनीय कार्य किया है। फिर भी इस काल की सभी रचनाएं समान रूप से सुंदर नहीं हैं। कुछ रचनाएं ऐसी हैं जो मात्र संख्या में ही वृध्दि करती हैं। इस काल के प्रमुख लेखकों में भारती, जानकी वल्लभशास्त्री और प्रभाकर माचवे के नाम उल्लेखनीय हैं।

"अंधायुग"

गीतिनाट्य के क्षेत्र में स्तुत्य सफलता प्राप्त करने वालों में धर्मवीर भारती प्रमुख हैं। उनका "अंधायुग" हिंदी का सर्वश्रेष्ठ गीतिकाव्य माना जाता है। अंधायुग से पूर्व जो गीतिनाट्य थे, वे या तो एकांकी थे, अथवा उनमें वह व्यापकता नहीं आने पाई थी, जो गीतिनाट्यों के लिए अपेक्षित होती है। "अंधायुग" प्रथम ऐसा गीतिनाट्य है, जो गीतिनाट्य की कसौटी पर पूर्णतः खरा उतरता है।

लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों, कल्पना, जीवनदर्शन और चिंतन को अपने ढंग से संजोया सम्हाला है। यह कथा युध्दोपरांत की है। अतः युध्द के परिणामों और तत्जनित स्थितियों, वृत्तियों और प्रतिक्रियाओं का यथार्थ चित्रण हुआ है। संवाद कौशल की दृष्टि से "अंधायुग" अद्भुत है। वे ना तो काव्य हैं, और न मात्र नाटकीयता से ओतप्रोत। उनमें काव्यत्व और नाटकीयता का समन्वय है। कथोपकथनों की विशेषता, परिस्थिति और विषय के अनुसार बदलती हुई लय है। एकरसता से बचने के लिए छंदो का बदलाव भी है। गीतिनाट्यों में इतनी सफलता के साथ वृत्तगंधी कथोपकथनों का प्रयोग प्रथम बार अंधायुग में ही हुआ है। अंतराल में किसी भी प्रकार की छंद योजना से मुक्त वृत्तगंधी गद्य का भी प्रयोग हुआ है। मुक्त छंद में कोई लिरिक-प्रवृत्ति की कविता अलग से लिखी जाए तो छंद की मूलयोजना वही नहीं बनी रहती है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर "अंधायुग" में क्षण- क्षण छंद योजना लय के अनुसार बदलती रहती है। भाव स्वयं ही छंद के बंधन को छोड़कर नैसर्गिक रूप से निसृत हुए हैं। यद्यपि "अंधायुग" में गीत नहीं है, लेकिन गीति तत्त्व उसमें आदि से अंत तक विद्यमान है। कथागायन में संगीतत्त्व है। अंधायुग में काव्य तत्त्व, नाट्य तत्त्व और संगीत तत्त्व मिलकर एकाकार हो गये हैं, जिसके कारण प्रभावोत्पादकता की त्रिवेणी सहज ही मन मोह लेती है।

इस प्रकार "अंधायुग" वस्तु संगठन, चरित्रांकन, सम्वाद योजना, बिम्ब योजना, प्रतीकात्मकता, नाटकीयता, काव्यत्व, अभिनेयत्व और भावाभिव्यंजना की दृष्टि से न केवल श्रेष्ठ है, अपितु गीतिनाट्य के इतिहास में सर्वोच्च कृति है।

"सृष्टि का आखिरी आदमी" :-

"नदी प्यासी थी" संग्रह में संकलित "सृष्टि का आखिरी आदमी" भारतीजी का लघु गीतिनाट्य है। भारतीजी के अनुसार यह रेडियो छंद नाट्य है। इसमें युध्द से संत्रस्त सभ्यता, शोषण, नफरत और लोलुपता का हृदयग्राही चित्रण है। इसमें सृष्टि के अंतिम क्षणों का वर्णन है। इस गीतिनाट्य में आदि से अंत तक अतिशय भावुकता और मानवहृदय के संघर्ष को चित्रित किया गया है। इसमें संवाद कहीं कही उद्घोषक की आवाज में दब गये हैं, फिर भी यत्र तत्र सशक्त और नाटकोचित संवादों का सृजन हुआ है। सहज स्वाभाविक मुक्त छंद और प्रसंगानुकूल बदलती लय "अंधायुग" जैसी हैं।

इंदुमती :-

प्रयोगवादी कवि, गिरिजा कुमार माथुर रचित इंदुमती (1951) सर्वप्रथम प्रतीक में सितम्बर में प्रकाशित हुई। बाद में लेखक ने इसे अपने कविता संग्रह धूप के घान में संकलित कर दिया है। "धूप के घाम" में गीतिनाट्य का प्रारम्भ अनायास ही हो जाता है। यदि कोई मात्र "धूप के घान" में "इंदुमती" बढ़े तो उसे गीतिनाट्य न होने का भ्रम हो जाए। इसमें इंदुमती के स्वयंवर का वर्णन है। प्रारम्भ में रघुकुल की यशगाथा और इंदुमती के रूप सौन्दर्य का वर्णन है। सम्पूर्ण स्वयंकर में इंदुमती को कोई आकर्षित नहीं कर पाता और अंत में वह रघु के गले में जयमाला डाल देती है। इस कथानक को लेखक ने अपनी कल्पना शैली से अनुपम बना दिया है। वास्तव में कथोपकथन ही इस रचना के प्राण हैं।

पृथ्वीकल्प :-

पृथ्वीकल्प माथुरजी का दुरूह और अति कल्पनायुक्त गीतिनाट्य है। समस्त कथानक चार खंडों में विभक्त है। पहला खंड निहारिका चक्र है। इसमें इतिहास सदियों के माध्यम में चित्रित किया गया है। इसमें स्वयं इतिहास अपनी कहानी कहता है। उसके अनुसार सदैव सत्य की असत्य पर विजय हुई हैं। लेकिन ज्योति-तिमिर का संघर्ष निरंतन है। दितीय "स्वर्णदेश खंड" है। इसमें वर्तमान औद्योगिक पद्धतियों का प्रतीक चित्र है। तृतीय खंड "लौह देश" है। इसमें राज्यवाद, सैन्यवाद, अग्रिनायकवाद और यूथवादो सामूहिक यंत्रों की अभिव्यक्ति हुई है। अंतिम "भविष्य खंड" है। इसमें संसार के सामान्य जनों का महाप्रलय के बाद का चित्र है। इसे विज्ञान काव्य को संज्ञा दो गई है। इसमें न केवल अत्याधुनिक टेक्नोलॉजी से संबंधित भाषा का प्रयोग किया गया है, बल्कि बहुत से नये शब्दों की रचना भी हुई है। पृथ्वीकल्प का अभिनय नहीं हो सकता। गीतिनाट्य के लिए नाटकीयता और काव्यत्व दोनों अनिवार्य हैं। प्रस्तुत नाटक में दोनों का अभाव है। सारी घटनाएँ प्रतीक रूप में होने के कारण इसे सफल गीतिनाट्य नहीं माना जा सकता।

गीतिपरक रचनाओं में कोई महत्त्वपूर्ण नहीं है। "कल्पान्तर" में वर्तमान युग में बदलते संदर्भों पर प्रकाश डाला है। मानव विरोधी सभ्यता जिसको पूंजीपतियों ने प्रश्रय दिया है, अंततः समाप्त हो जाती है। उसके बाद एक नयी सभ्यता का उदय होता है। "दंगा" भारतीय विभाजन के समय हुए दंगों पर आधारित है। मृत्यु का तांडव, भय का आतंक, और अनश्चिय की स्थिति का सफल वर्णन हुआ है। "राम" में मर्यादा पुरुषोत्तम राम की महत्ता और आदर्शवादिता का वर्णन है। ब्राहमण पुत्र को मृत्यु, और राम दारा उसे जोवन दान देना, उनको प्रजावत्सलता का प्रतीक है। "स्वर्णश्री" में गांधीजो के राष्ट्रीय आंदोलन का चित्रण है। वास्तव में इन समस्त रचनाओं में कथा वस्तु का अभाव है। नाटकीयता को दृष्टि से रचनाएं सुंदर बन पड़ी हैं।

जानकीवल्लभ शास्त्री :-

छायावादी काव्यधारा के सुपरिचित मूर्धन्यकवि आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री का नाम हिंदी गीतिनाट्य के इतिहास में महत्त्वपूर्ण है। "पाषाणी" और "तमसा" आपके दो गीतिनाट्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं। गीतिनाट्यों में शास्त्रीय संगीत का प्रयोग प्रथमबार अत्यंत कुशलता के साथ किया गया है। इसके पूर्व और परवर्ती गीतिनाट्य राग-रागिनियों से आपूरित नहीं है। शास्त्रीजी ने इन्हें संगीत प्रधान होने के कारण संगीतिका कहा है। वैसे आजकल ऑपेरा के लिए संगीत शब्द का व्यवहार होता है। "तमसा" और "पाषाणी" में शास्त्रीजी ने इन्हें गीतिनाट्य ही कहा है। "पाषाणी" शास्त्रीजी का प्रथम गीतिनाट्य संग्रह है, जिसमें पांच एकांकी उसी क्रम में संग्रहित है जिस क्रम में उनकी रचना हुई है जो इस प्रकार हैं,

1. गंगावतरण
2. उर्वशी
3. वासंती
4. पाषाणी
5. मंजरी

गंगावतरण में भगीरथ द्वारा गंगा को स्वर्ग से पृथ्वी पर लाने का आख्यान है। गंगावतरण में संघर्ष उतना तीव्र नहीं, जितना गीतिनाट्यों के लिए अपेक्षित है। फिर भी भगीरथ के हृदय में उठनेवाले द्वंद का सुंदर वर्णन है। इसमें विशुद्ध परिमार्जित भाषा का प्रयोग है। भाषा कहीं भी शिथिल नहीं हुई। संगीतत्त्व की दृष्टि से शास्त्रीजी के गीतिनाट्य अपनी सानी नहीं रखते, पर कहीं कहीं संगीतत्त्व के समक्ष गीतिनाट्य के अन्य तत्त्व नाटकीयता और काव्यत्त्व दबे दबे से लगते हैं।

उर्वशी :-

उर्वशी पाषाणी संग्रह का दूसरा गीतिनाट्य है। इसकी प्रेरणा विक्रमोर्वशीय से प्राप्त हुई है। इसमें औद्योगिक कला प्रेम तथा लौकिक द्वंद्वात्मकता को केन्द्रित करके भोग वादिनी कला का वर्णन है। सम्पूर्ण गीतिनाट्य में मादक संगीत और रूप सौन्दर्य छलकता हुआ दिखाई देता है। भाषा सुष्ठ, प्रांजल और संस्कृतनिष्ठ है। काव्य तत्त्व, नाट्य तत्त्व और संगीत तत्त्व तीनों ही दृष्टियों से कथानक परिपूर्ण है।

वासंती :-

वासंती एक प्रतीक गीतिनाट्य है। जिसमें पतझड़, आशा, विश्वास, वासंती आदि अमूर्त पात्रों के साथ-साथ किसान, मजदून, जवान आदि मूर्त पात्रों का समावेश हुआ है, यूंकि, यह नाटक प्रतीकात्मक रूपक है जिसके कारण चरित्रों का विकास नहीं हुआ। भाषा संग्रह के अन्य गीतिनाट्यों से यह भिन्न है। वासंती में मिश्रित भाषा का प्रयोग हुआ है। गीत सुंदर बन पड़े हैं। इनमें से कुछ गीत लोक धुन पर आधारित हैं।

पाषाणी :-

पाषाणी मनोवैज्ञानिक गीतिनाट्य है। जिसमें अहल्या के मन को काम कुंठा अभिव्यक्त हुई है। पाषाणी मन की निराशा, विफलता और यौनकुंठा को व्यक्त करने में पूर्ण सफल है। फ्रायड के मनोविश्लेषण का इस पर स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। मार्मिक अनुभूति और तीव्र मानसिक अंतर्द्वंद्व इस गीतिनाट्य की विशेषताएं हैं। हृदयस्थ भावों का प्रस्तुतीकरण अत्यंत कुशलता के साथ हुआ है। अंतर्द्वंद्व की दृष्टि से पाषाणी संग्रह की सर्वश्रेष्ठ कृति है। संवाद उत्तम हैं। उनमें नाटकीयता और कथानक को गति देने की क्षमता है। संगीत की दृष्टि से भी पाषाणी अभिनव है। संध्या से लेकर प्रातः तक पाई जाने वाली राग-रागिनियों का प्रयोग इसमें हुआ है। इस प्रकार संगीत, नाटक और काव्य तीनों ही दृष्टियों से पाषाणी सुंदर है। अभिनेयता की दृष्टि से पाषाणी में कुछ कमियां हैं।

मंजरी :-

मंजरी पांच दृश्यों को त्रासदी है, जिसको प्रेरणा राजेश्वर से ली गयी है। मंजरी में पात्रों के चरित्र पूर्णतः स्पष्ट है। राजा प्रेमी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। रानी आदर्श महिषी के रूप में प्रस्तुत की गयी है। पति की प्रसन्नता के लिए वह स्वयं मंजरी को विवाह के लिए मनाने जाती है। किन्तु वह ईर्ष्या से बच नहीं पाई। इसलिए वह मंजरी को बंदी बना लेती है।

मंजरी के कथोपकथन संग्रह के समस्त गीतिनाट्यों से सुंदर है। उनमें नाटकीयता व अभिनेयता है। मानसिक संवेग और आंतरिक संघर्ष का चित्रण मंजरी में भी पाषाणी की भांति ही हुआ है। मंजरी के मन में होने वाली उथल पुथल, मंजरी की मृत्यु पर भैरवानंद और राजा के मन की व्यथा का चित्रण बड़े ही सुंदर ढंग से हुआ है। संगीत की दृष्टि से इसमें भी अनेक राग-रागिणियों का प्रयोग किया गया है। राग हिंदोल, तिलककायेद, राम हमीर, राग वृंदावनी, राग गौड सारंग आदि का प्रयोग बड़ी कुशलता से किया गया हैं। नाटकीयता की दृष्टि से भी मंजरी सफल है।

"तमसा" गीतिनाट्य संग्रह :-

तमसा जानकी वल्लभ शास्त्री का दूसरा गीतिनाट्य संग्रह है। इसमें भी पांच गीतिनाट्य संग्राहित है। मदन दहन, तमसा, मुक्तपुरुष, पांचाली और गोपा।

इन गीतिनाट्यों की विषयवस्तु प्रायः प्रागैतिहासिक है। किन्तु प्रत्यक्ष जगत की परोक्ष झांकी भी कहीं कहीं प्रदर्शित की गई है। अतीत की अव्यतीत संवेदनाएँ युग चेतना के तारों से बंधकर गीतिनाट्यों में प्रतिध्वनित हुई हैं। संगीतमय परिवेश में भावनाओं, अनुभूतियों और मनोविकारों को वाणी प्रदान हुई है। भावनाओं की तीव्रता भाषा को लयपूर्ण बनाती हुई राग विशेष में साकार हो जाती है। छंदों के प्रस्तार की भांति राग रागिनियों के भेद प्रभेद भी भावनाओं की उच्चता को ही अनुरूप वाणी देते हैं। अतः संगीत से गीतिनाट्यों की तीक्ष्णता

और मार्मिकता छा जाती है। इन सभी नाटकों में मानव जीवन के राग तत्त्वों को भावनाओं और अनुभूतियों की दंदात्मक तीव्रता और गहन मार्मिकता में उभारा गया हैं। वेदना इन गीतिनाट्यों में राशि-राशि बिखरी पड़ी है। उनके गीत मन के तारों को झनझना देते हैं।

मदन दहन :-

मदन दहन पौराणिक गीतिनाट्य है, जिसमें योगिराज शंकर द्वारा कामदेव को भस्म करने की पौराणिक कथा अंकित है। "मदन दहन" में तीन दृश्य हैं, परन्तु द्वितीय दृश्य सर्वोत्तम है। उसमें उमा के मन की पीड़ा संघर्ष और वेदना को बड़े सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। संगीत तत्त्व आदि से अंत तक मन भावना और आल्हादकाकर है। राग शुध्द कल्याण, राग बसंत, त्रिताल दादरा आदि के माध्यम से संगीत की अनुपम धारा प्रवाहित की गई है। काव्यत्त्व की दृष्टि से भी यह नाट्य सुंदर है। लेखक ने रंग संकेत, ध्वनि संकेत तथा राग रागिनियों आदि के निर्देश देकर उसे नाटकीयता प्रदान की है। तुकांत छंदों में संवाद सहजगति की दृष्टि से भी यह गीतिनाट्य पूर्ण सफल है। वास्तव में काव्य, नाटक और संगीत की त्रिवेणी से ओतप्रोत मदन दहन शास्त्रीजी का अभिनव प्रयोग है। भावनाओं की तीव्रता रागमयी भाषा में साकार हो गई हैं।

"तमसा" :"

"तमसा" तमसा संग्रह का दूसरा गीतिनाट्य है, जो 4 दृश्यों में विभाजित है। प्रारम्भ में प्रस्तावना है, जिसमें स्त्री पुरुष नैरेटरों के माध्यम से रामायण कालीन वातावरण और घटनाओं का संकेतात्मक वर्णन है। "तमसा" गीतिनाट्य का मूल विषय मानव की प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन है। मानव को महत्ता कवि ने ईश्वर से भी बड़ी निरूपित की है। राम और सीता उसी के प्रतीक है। इसमें तामसी सात्त्विकी प्रवृत्तियों का संघर्ष है। हिंसा, क्रूरता, स्वार्थपरता पर अंत में अहिंसा और परिश्रम की विजय होती है। कथोपकथन सुंदर छोटे और नाटकीय कला से परिपूर्ण है। नाटकीयता आदि से अंत तक बनी रहती है। संगीत के

माध्यम से सुंदर वातावरण प्रस्तुत किया है। प्रस्तावना में तमसा का वर्णन, बहेलियों का गीत, ऋतु वर्णन आदि में वातावरण मुखर हो उठता है। काव्यत्व और नाट्यत्व की दृष्टि से भी तमसा सुंदर है। क्रौंच को देखकर महर्षि वाल्मिकि के शब्द जहां हृदय की वेदना और अंतर्द्वंद का वर्णन करते हैं, वहीं काव्यानंद की भी सृष्टि करते हैं।

"मुक्त पुरुष" :-

मुक्त पुरुष में भगवान कृष्ण के जीवन की लघु झांकी प्रस्तुत की गई है। कृष्ण जन्म से लेकर गोकुल के छोड़ने की घटनाओं को थोडे से परिवर्तन के साथ मुक्त पुरुष में दोहराया गया है। इनमें कहीं भी सम्वाद नहीं आये हैं। इनमें केवल हृदय के संघर्ष और देष की स्थिति का ही वर्णन है। कंस के शंकित मन और कृष्ण के गोकुल त्याग के समय के अंतर्द्वन्द का वर्णन ही मुख्य कथा है। मुक्त पुरुष अंतर्द्वन्द और भाषाभिव्यंजना की दृष्टि से अन्य गीतिनाट्यों से सुंदर है, किन्तु नाटकीय दृष्टि से उतना सुंदर नहीं है। कहीं-कहीं घटनायें केवल संकेतात्मक रूप में प्रस्तुत की गई हैं। देशकाल और वातावरण की दृष्टि से भी मुक्त पुरुष में न तो कोई नवीनता है और न सुंदरता। शास्त्रीजी ने राग-रागिनियों का संकेत भी कम दिया है।

पांचाली :-

पांचाली, तमसा संग्रह की चतुर्थ गीतिनाट्य है। जिसमें द्रौपदी के स्वयंवर और उसके बाद की घटनाओं का वर्णन है। कुल तीन दृश्य हैं। इनमें मूलतः यह बताया है कि द्रौपदी किस प्रकार 5 पतियों की पत्नी बनीं। पांचाली के कथानक में कोई नवीनता नहीं है, केवल शब्दों और भाषा की ही अंतर है। इस गीतिनाट्य की सबसे बड़ी विशेषता इसके संवाद हैं। एक-एक वाक्य के संवादों में हृदय की वेदना और निराशा बड़े सुंदर ढंग से व्यक्त हुई है। यह केवल कथोपकथन ही नहीं, हृदय की द्वंद्वात्मक अनुभूतियों का चित्रांकन है।

गोपा :-

गोपा मूलतः यशोधरा के जीवन की कथा है। गौतम की विरक्ति गृहत्याग और पत्नी के प्रति उपेक्षा ने गोपा के हृदय को खंड खंड कर दिया। अंतर्द्वन्द ओर संघर्ष की दृष्टि से यह गीतिनाट्य श्रेष्ठ बन पड़ा है। सारा गीतिनाट्य विरह की पीड़ा से पूरित है। विरह की समस्त अवस्थाओं का चित्रण हुआ है। स्मरण, चिंता, उद्वेग, प्रलाप, जड़ता, उन्माद आदि दशाओं का चित्रण गोपा में हुआ है। वास्तव में गोपा का प्रस्तुतीकरण सुंदर ढंग से हुआ है। आंतरिक जीवन में प्रवृत्तियों के पारस्परिक संघर्ष का चित्रण इन संगीतिकाओं का मुख्य उद्देश्य है। इसमें संगीत के माध्यम से लेखक ने पूर्ण वृत्तियों को उभारा है।

हंसकुमार तिवारी :-

कुछ आलोचकों ने हंसकुमार तिवारी रचित पुनरावृत्ति की रचनाओं को गीतिनाट्य की संज्ञा दी है। इसमें शकुन्तला, मिलन-यामिनी, मेघदूत और कच देवयानी और पुजारन रचनाएं हैं। ये सभी संगीत रूपक हैं।

चिरंजीत :-

इस प्रकार चिरंजीत की रचनायें भी पूर्ण गीतिनाट्य न होकर संगीत रूपक अधिक हैं। = गीत नाट्य ?

प्रभाकर माचवे :-

आपने तीन गीतिनाट्य लिखे हैं। "मुक्ति देवता प्रणाम" , "विंध्याचल", "रामगिरी", किन्तु ये तीनों गीतिनाट्य की शिल्प पर खरे नहीं उतरते।

मुक्तिदेवता प्रणाम :-

इसका कथानक नरेश मेहता के अग्निदेवता जैसा है। इस गीतिनाट्य में भारत की महिमा का वर्णन है। महात्मा गांधी को मुक्ति का देवता कहा है। उन्हीं के कारण भारत को विदेशी दासता से मुक्ति मिली। अंत में मुक्ति देवता को प्रणाम करते हुए कथानक समाप्त हो जाता है। इसमे नैरेशन के माध्यम से

कथानक को आगे बढ़ाया है। वास्तव में यह रेडियो फीचर के निकट है। काव्यत्व की दृष्टि से भी इसमें कोई आकर्षण नहीं है।

विंध्याचल :-

विंध्याचल भी गीतिनाट्य न होकर रेडियो फीचर है। गद्य पद्यमय संवाद इसे चंपू की स्थिति में ला देते हैं। कथा का विकास घटनाओं के आधार पर हुआ है। इसमें न तो किसी प्रकार का संघर्ष है और न काव्यात्मकता। नैरेशन के माध्यम से कथा आगे बढ़ती है। विंध्याचल गीतिनाट्य न होकर गीतिनाट्य पूरक रचना है।

रामगिरी :-

मुक्ति देवता और विंध्याचल की तुलना में "रामगिरी" सफल रचना है। इसमें तीन विभिन्न कालों की घटनाओं को सुंदर ढंग से संजोगा गया है। लेखक ने प्रारम्भ में रामगिरि की महत्ता का वर्णन किया है। अंत में लेखक सूत्रधार के माध्यम से रामगिरि कहाँ है - इस पर विचार करता है। सम्पूर्ण गीतिनाट्य विवरणात्मक है। विभिन्न युगों को एक साथ संजोने के कारण कथानक न के बराबर है। कुल मिलाकर माचवेजी की कोई भी कृति गीतिनाट्यों के तत्त्वों की दृष्टि से सफल कृति नहीं कही जा सकती।

भारत भूषण अग्रवाल :-

"सेतुबंधन" में आपके तीन काव्य-रूपक संकलित हैं - "मिलन तीर्थ", "शांतिपथ", और "सेतुबंधन"। इन तीनों की विषयवस्तु लगभग समान है। वर्णन शैली में भी कोई विभेद नहीं है। इसमें सांस्कृतिक संदेश के स्वर मुखरित हैं, और इन स्वरों में भारत के हृदय की प्रतिध्वनि है। ये सभी काव्यरूपक नाट्य विधा के निकष पर खरे नहीं उतरते। छंदों में प्रवाह है, और काव्यत्व का उन पर छिहरता रहा है। गीतिनाट्य की दृष्टि से जहां ये असफल हैं, काव्य कल्पना और भावाभिव्यंजना की दृष्टि से वहीं सफल हैं।

कर्तार सिंह दुग्गल :-

गीतिनाट्य के क्षेत्र में आपने काफी नवीन प्रयोग किये हैं। एक पात्री गीतिनाट्य लिखकर इस विधा को आपने नवीन दिशा दी हैं। इन्हे अंग्रेजी में ड्रामाटिक मोनोलोग की संज्ञा दी गई है।

ऊपर की मंजिल :-

यह एक पात्री गीतिनाट्य है। इसमें एक ऐसे पुरुष के हृदय का संघर्ष प्रस्तुत किया गया है, जिसकी पत्नी एक अन्य पुरुष से प्रेम करती है। वास्तव में दुग्गल का यह अभिनव प्रयोग है।

अमानत :-

यह "ऊपर की मंजिल" की तरह का ही गीतिनाट्य है। "अमानत" में कवि हृदय बोलता है। यह एक मनोवैज्ञानिक गीतिनाट्य है, जिसमें एक मरणासन युवती का हृदयग्राही चित्रण किया गया है। इसमें न तो किसी चरित्र का विकास हुआ है और न विशेष नाटकीयता का निर्वाह। उसमें काव्यत्त्व अधिक है। वस्तुतः दुग्गल के ये गीतिनाट्य हिंदी साहित्य में अभिनव है।

प्रफुल्लचंद्र ओझा :-

प्रफुल्लचंद्र ओझा की लघुसंगीत नाटिका कीर्तिदीप में भारत के अतीत की झांकी प्रस्तुत की गयी है। वर्तमान, अतीत के भव्य दृश्य देखकर विमुग्ध हो जाता है। अतीत कहता है, वर्तमान जीवन भी बुरा नहीं है। यदि अतीत ने बुध्द दिये तो वर्तमान ने गांधी। वास्तव में यह नाट्य कविता के अधिक निकट है। इसमें नाटकीयता दंद भावाभिव्यक्ति, प्रेषणीयता कुछ भी नहीं है।

मधुकर गंगाधर :-

मधुकर गंगाधर के दो गीतिनाट्य प्रकाशित हुए हैं। आकाश पाताल और दूसरा विषपान।

आकाश पाताल :-

इसके माध्यम से एक झोपड़ी और महल के माध्यम से धनी और अमीर के जीवन का चित्र खींचा है। लेखक का अभिप्राय क्रांति के माध्यम से नवजागरण लाना है। इसमें संघर्ष अति क्षीण है। कुल मिलाकर सामान्य रचना है।

विषपान :-

इस गीतिनाट्य में भगवान शिव द्वारा विषपान की कथा अंकित है। "विषपान" का संघर्ष अति क्षीण है। फिर भी क्रियात्मक एवं मानसिक दोनों प्रकार के संघर्ष का चित्रण है। ये गीतिनाट्य घटना प्रधान है। चरित्रों का विशेष विकास नहीं हुआ है।

स्वातंत्र्योत्तर गीतिनाट्य - द्वितीय चरण :-

स्वातंत्र्योत्तर गीतिनाट्यों का द्वितीय चरण गुणात्मक दृष्टि से प्रथम चरण की रचनाओं की तरह ही है। इस समय तक आलोचकों ने गीतिनाट्य को स्वतंत्र साहित्यिक विधा मानकर उनकी समीक्षा आरम्भ कर दी थी।

इस काल के सभी नाटक जीवन के अत्यंत निकट है। उनमें बुध्दि और हृदय दोनों का समन्वय है। इन नाटकों की प्रमुख विशेषता इनकी सामाजिकता है। इस काल के अधिकांश गीतिनाट्य काल्पनिक हैं। युग की सम्प्रत समस्याओं को काव्यात्मक और प्रतीकात्मक ढंग से उभारा है। इस चरण में गीतिनाट्यों की रचना मूलतः रेडियों को ध्यान में रखकर ही की जाने लगी। अतः इन गीतिनाट्यों को रेडियो गीतिनाट्य कहा जा सकता है। इनमें नाट्य तत्त्वों और काव्य तत्त्वों का मणिकांचन सहयोग हुआ है। लोक नाट्यों का प्रभाव भी इस काल की रचनाओं पर पड़ा। इस दृष्टि से लक्ष्मीनारायण लाल का कार्य सराहनीय है।

सूखा सरोवर - डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल :-

सूखा सरोवर डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल द्वारा रचित पूर्ण गीतिनाट्य है। गीतिनाट्यों को लोक मिथ की माध्यम से प्रस्तुत करने वाला यह प्रथम गीतिनाट्य है। इस लालजी ने लोकधर्मी गाथा नाट्य की संज्ञा दी है।

लेखक ने उपक्रम के माध्यम से एक हृदयग्राही एन्द्रजालिक गीतिनाट्य प्रस्तुत किया है। जिसकी रेखायें मानस में गहरे बैठ जाती हैं। नीलम देशवालो एक नगरो में राजा था, उसके राज्य में एक अद्वितोय सरोवर था। अचानक एक दिन वह सरोवर सूख जाता है। सरोवर के देवता कहते हैं, कि कोई सतवंतो नार मेरे सरोवर में मंगलघट डाले तभी में पानी दूंगा। रानी ने मंगलघटन डाला पर सरोवर में पानी नहीं आया। क्रोधित होकर राजा ने रानी को मरवा दिया। फिर उसो रानी की चेरी के मंगल घट डालने पर सरोवर में पानो आ जाता है। प्रसन्न होकर राजा उससे विवाह कर लेता है। अब पहली रानी राज हंसनी बन जाती है। और विरह के गीत गाती है। गीत के उड़नखटोले पर बैठ कथानक हृदय के गहरे अतल में समा जाता है।

"सूखा सरोवर" के संवाद गीतिनाट्य के सर्वथा अनुकूल और प्रभावशाली है। कहीं भी लम्बे और उबाउ सम्वाद नहीं। कथोपकथनी में गति क्षिप्रता और रंग मंचीय समस्त विशेषताएं है। लेखक का दावा है, कि उन्होंने कभी कविता नहीं लिखी। परन्तु सूखा सरोवर के सम्वाद वृत्त गंधी हैं, और भावों को व्यक्त करने में पूर्ण सक्षम हैं। श्री॰लाल के रंग निर्देश संकेतों और मंच के माध्यम से सूखा सरोवर को अभिनेय बनाने का प्रयत्न किया है। मंचोय व्यवस्था, ध्वनि निर्देशों के कारण सूखा सरोवर पूर्ण सफल अभिनेय गीतिनाट्य है। लेखक ने लोकगीतों की धुन पर संगीत दिया है। गीतिनाट्य के बिम्ब बहुत सुंदर बन पड़े है। अंर्तदंन्द और भावावेश के अनेक प्रसंग सूखा सरोवर में आये हैं। भावुकता के साथ साथ काव्यात्मकता की दृष्टि से भी "सूखा सरोवर" सुंदर बन पड़ा है। वास्तव में

दो तीन गीतिनाट्यों को छोड़कर ऐसे गीतिनाट्य बहुत कम लिखे गये हैं। सूखा सरोवर की गिनती श्रेष्ठ गीतिनाट्यों में की जा सकती है।

रामधारीसिंह दिनकर :-

वर्तमान युग के सशक्त कवि रामधारीसिंह दिनकर ने अपनी भाव भाव रश्मियों से गीतिनाट्य को भी आलोकित किया है। आपकी रचना उर्वशी को ज्ञानपीठ पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया है। इसके अतिरिक्त "मगध महिमा" और "हिमालय का संदेश" नामक लघुगीतिनाट्यों की रचना भी की है।

मगध महिमा :-

"मगध महिमा" में मगध के इतिहास की सुंदर झांकी प्रस्तुत की गई हैं। इसमें आठ छोटे छोटे दृश्य हैं। लेकिन कुछ दृश्यों में नाटकीय कथोपकथनों का अभाव है। समस्त घटनाएं नरेशन के माध्यम से गति प्राप्त करती हैं। आंतरिक संघर्ष और द्वंद का चित्रण भी सुंदर हुआ हैं।

हिमालय का संदेश :-

इस गीतिनाट्य में दिनकर ने क्रांति और शांति के द्वंद को दिखाते हुए शांति की प्राण प्रतिष्ठा की है। इस लघु गीतिनाट्य में दृश्यों को संदेश देता रहता है। इस कारण उत्तरार्ध मे नाटकीयता लुप्त सी हो गई है। शिल्प की दृष्टि से रेडियों के अधिक निकट है। सही अर्थों में यह गीतिरूपक है। कृति में मार्ग्यु है, पर गीतिनाट्य की कसौटी पर सफल रचना नहीं कहा जा सकता।

उर्वशी :-

श्री·दिनकर रचित उर्वशी एकमात्र ऐसा गीतिनाट्य है, जिसे भारत के सर्वोच्च पुरस्कार "ज्ञानपीठ" से पुरस्कृत किया गया है। यह एक अद्भुत कृति है। यहाँ एक ओर समालोचकों, मजीवियों और दार्शनिकों ने इसकी मूदि-मूदि प्रशंसा की है, वहाँ इसके विरुध्द तीव्र प्रतिक्रिया भी हुई है। उर्वशी श्रृंगार प्रधान, दार्शनिक और कामाध्यात्मक पूर्ण गीतिनाट्य है। उर्वशी की रचना शिल्प संश्लिष्ट

है। सामान्यतः उर्वशी को काव्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि काव्य सर्गबध्द होता है। लेकिन उर्वशी सर्गबध्द नहीं हैं। उर्वशी को निर्विवाद रूप से पाठ्यगीतिनाट्य कहा जा सकता है। वास्तव में उर्वशी में काव्य और नाटक रूप एकाकार नहीं हो सके हैं। उर्वशी का मूल स्वर "कामाध्यात्म" है। कवि ने स्वयं काम के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए उसे धर्म के समान फलदायी कहा है। उनके अनुसार काम विकसित और उदात्त हो जानेपर धर्म के समान शीतलता प्रदान करता है। जिनका काम कुंठित और उपेक्षित है" वह आनंद के अनेक सूक्ष्मरूपों से वंचित रह जाता है। दंन्द और संघर्ष की दृष्टि से उर्वशी अति सुंदर हैं। नाटकत्त्व की दृष्टि से उर्वशी सफल रचना नहीं है, उसमें अभिनय की सम्भावना नहीं है। काव्यत्त्व की दृष्टि से उर्वशी उतनी ही सफल है, जितनी की नाट्यत्त्व की दृष्टि से असफल।

सिध्दनाथ कुमार :-

सिध्दनाथ कुमार गीतिनाट्य शैली, शिल्प एवं सौन्दर्य की दृष्टि से बहुत सुंदर बन पड़े हैं। "जीवन" उनकी प्रथम गीतिनाट्य रचना है। इसका प्रधान विषय प्रेम है। मानव-जीवन का चरम लक्ष्य प्रेम ही है इसमें प्रतीकात्मक रूप से मानव के जन्म और मृत्यु का चित्रण है।

इनका दूसरा गीतिनाट्य, "वातायन खोलो" है, जो रेडियो से प्रसारित हुआ है।

आपका तीसरा गीतिनाट्य "कवि" है। इसमें एक कवि के जीवन पर मार्मिक प्रकाश डाला गया है। इसमें काल्पनिकता पर यथार्थ की विजय दिखाई गई है।

1· सृष्टि की सांझ :-

इस गीतिनाट्य में युध्दजनित परिणामों तथा उससे उत्पन्न परिस्थितियों का वर्णन किया गया है। इसकी कथा आगत भविष्य की है। लेखक ने वैयक्तिक दन्द के माध्यम से सामाजिक भावनाओं को वाणी दी है। इसमें मनोविकार भी पात्र रूप में आये है। सम्वाद नाटकीय और अभिनेय हैं।

2. लौह देवता :-

लौह देवता में वर्तमान भौतिक युग की समस्याओं को प्रस्तुत किया गया है। इसका कोई विशिष्ट कथानक नहीं है। दीर्घकाल की मानवीय भावनाओं का अंकन किया गया है। सम्पूर्ण गीतिनाट्य प्रतीकात्मक है। लौह देवता यंत्रों का प्रतीक है। पुजारी पूंजीपतियों का प्रतिनिधित्व करता है। मानव त्रस्त है, और क्रांति पर उतारू है, उसी के माध्यम से उसका शोषण रूक सकता है। लौह देवता में आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार का द्वन्द परिलक्षित है। भावाभिव्यंजना और मनोविश्लेषण दोनों ही दृष्टियों से यह कृति सुंदर है।

संघर्ष :-

वास्तविक संघर्ष और हृदयानुभूति की दृष्टि से संघर्ष एक उत्तम गीतिनाट्य है। एक कलाकार की हृदय, वेदना को सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया गया है। परन्तु न तो चरित्रों का विकास हुआ है, न ही कथा विस्तार क्षण विशेष का मानसिक संघर्ष ही प्रस्तुत कृति में है। उसमें विस्तार की अपेक्षा गहराई है।

विकलांगों का देश :-

"विकलांगों का देश" में एक ऐसे देश की कल्पना की गयी है, जिसमें सभी व्यक्ति अंगहीन हैं। यह एक ऐसे समाज का प्रतीक है, जहाँ मनुष्य की शक्तियाँ पूर्ण रूप से विकसित नहीं होती। इसमें कथानक का विकास नहीं। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे कई घटनाओं को जोड़ दिया गया है। हृदय की वैयक्तिकता और द्वन्दात्मकता अवश्यक है।

बादलों का शाप :-

मानव के दुख का कारण भाग्य है, या प्रकृति का शाप? यही मानसिक चिंतन "बादलों का शाप" गीतिनाट्य का विषय है।

नरेश मेहता :-

नरेश मेहता के दो गीतिनाट्य प्रकाशित हुए है। 1. अग्निदेवता और 2. संशय को एक रात।

1. "अग्निदेवता" :-

यह मुख्यतः रेडियों के लिए लिखा गया है। किन भीषण परिस्थितियों युध्द विभीषिकाओं में से होता हुआ मानव आज की स्थिति में आया है। यही इसका मूल विषय है। इतिहास की घटनाएँ एक एक करके हमारे सामने आती हैं। ऐतिहासिक घटनाओं के साथ साथ लेखक ने हमारी सांस्कृतिक विरासत का भी चित्रण किया है। अग्निदेवता युध्द और विकास की कहानी है। यह घटना प्रधान गीतिनाट्य है।

2. संशय की एक रात :-

यह एक बहुचर्चित गीतिनाट्य है। इसे आधुनिक युग की गीता कहा गया है। इसमें दशरथ और जटायु की प्रेतात्माएँ राम को कर्म का उपदेश देती हैं। इसमें 3 प्रश्न उठाये गये हैं। 1. युध्द वैयक्तिक है, या सामाजिक, 2. जीवन में व्यक्ति के निर्णय सत्य हैं, या समूह के और, 2. युध्द अनिवार्य हैं, या नहीं। इसमें की प्रजातांत्रिक पहुंच है।

रमेश कुंतल मेघ :-

यमुना और गंगा की लहरें :-

यह लेखक का एकमात्र गीतिनाट्य है। इसमें साम्प्रदायिक समस्या का चित्रण है। इसमें शेक्सपियर शैली में चरित्रों के द्वंदों को प्रगट करने की कोशिश की गयी है। पंडितराज जगन्नाथ ने मुगल कन्या लवंगी से ब्याह रचाया था, जिसके कारण हिंदु और मुसलमान दोनों ही उनसे जलते थे। पं.राज ने किस प्रकार उनके कुचक्रों को दूर कर अपनी पवित्रता का परिचय दिया, यही इस गीतिनाट्य का मेरुदंड है। काव्यत्त्व की दृष्टि से यह कृति सफल है।

वीरेंद्र नारायण :-

"सूरदास" :-

सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखा "सूरदास" वीरेन्द्र नारायण का एक सुंदर गीतिनाट्य है। जिसकी गाथा 3 अंकों में फैली हुई है। शीतला से अंधा हुआ एक नौजवान भिखारी और जहर से भरी एक जवान लडकी इसके प्रधान पात्र हैं। इसमें सूरदास सच्च प्रेमी एक आवारा नारी को अपनाकर जीवन में नई प्रेरणा प्राप्त करता है। वास्तविकता की भावभूमिपर गीतिनाट्य की सर्जना की गई है। यह एक अभिनेय नाटक है।

दुष्यंत कुमार :-

एक कंठ विषपायी :-

दुष्यंत कुमार वर्तमान पीढी के उन सशक्त लेखनीकारों में से हैं जिन्होंने साहित्य को नया मोड़ दिया है। एक कंठ विषपायी को आलोचकों ने अंधायुग के बाद हिंदी की अनुपम रचना माना है। इसमें नवीन और प्राचीन मान्यताओं का द्वंद्व चित्रित है। यह एक सशक्त रचना है। जिसमें गीतिनाट्य के लगभग सभी तत्त्वों का सम्मेलन है। वाजपेयी के अनुसार "यह काव्यनाटक शिल्प की दृष्टिसे और नाटकीय उपकरणों की दृष्टि से काफी समृध्द है। उसकी कथा नाटकोचित विकास क्रम से समन्वित है। सामान्यतः एक कंठ विषपायी की तुलना अंधायुग से की जाती है लेकिन दोनों के विषय व शिल्प में अंतर है।

स्वातंत्र्योत्तर गीतिनाट्य - अंतिम चरण :-

गीतिनाट्यों का आधतन काल शैली शिल्प तथा कथानक की दृष्टि से नवीन प्रयोग लेकर आता है। गीतिनाट्यों के स्वरुप तथा शिल्प दोनों में परम्परागत परिवर्तन हुआ।

कुछ लेखकों ने बच्चों के लिए लघु गीतिनाट्यों की भी रचना की। इन्हें वेश्म गीतिनाट्य की संज्ञा दी जा सकती है। कुछ गीतिनाट्य शुध्द नाट्यधर्मी

परम्परा पर भी लिखे गये हैं। इससे सिध्द होता है कि गीतिनाट्यों के क्षेत्र में भी अभी नए नए प्रयोग हो रहे हैं और अभी यह विधा गतिशील है और हो सकता हैं कि भविष्य में कुछ नवीन प्रयोग हों तथा और भी सुंदर गीतिनाट्यों की रचना हो।

इस कला के गीतिनाट्यों की प्रधान विशेषता इनकी अभिनेयता है। अधिकांश गीतिनाट्यों को सफलतापूर्वक रंगमंच पर प्रस्तुत किया जा सकता है। उत्तरप्रियदर्शी, समाधान, आराम हराम है और उध्दव ब्रज में आदि गीतिनाट्यों का मंचीय प्रदर्शन हो चुका है।

इस काल की रचनाओं में नाट्य तत्त्व और काव्य तत्त्व एकाकार हो गये हैं। ये गीतिनाट्य न तो अतिशय भावुकता से बोझिल हैं और न अतिशय काव्यात्मकता से हैं। न इनमें अतिशय संगीतात्मकता है। कुछ गीतिनाट्यों में व्यापकता नहीं है। फिर भी ये गीतिनाट्य, गीतिनाट्यों के तत्त्वों पर खरे उतरते हैं। बालकों के लिए गीतिनाट्यों में विचारात्मकता नहीं।

ज्ञान कुमारी "अजीत" :-

ज्ञान कुमारी अजीत ने बच्चों के लिए छोटे छोटे नाटकों की रचना की है। इनमें नृत्य नाट्य, संगीत नाट्य, नृत्य, रूपक, संगीत फीचर और गीतिनाट्य हैं। उध्दव ब्रज में इनका एकाकी गीतिनाट्य है। इसमें 5 दृश्य हैं। इनमें उध्दव के ब्रज जाने का चित्रण है। गीतिनाट्य के शिल्प पर यह खरा नहीं उतरता। न तो इसमें संघर्ष हैं, ना भावाभिव्यंजना। शायद लेखिका का उद्देश्य मात्र प्रदर्शन और बालकों का मनोरंजन करना ही रहा है। साहित्यिक दृष्टि से इस गीतिनाट्य में कुछ भी नहीं है।

सरस्वती कुमार दीपक :-

बाल गीतिनाट्यों के क्षेत्र में सरस्वती कुमार दीपक का गीतिनाट्य आराम हराम हैं भी महत्त्वपूर्ण है। यह एक दृश्य का गीतिनाट्य है। इसमें से बालिकाओं राधिया श्यामा का हास्य व्यंग्यपूर्ण चित्रण है। दोनों काम करने से कतरा कतराती हैं जब कि रामी मेहनती और परिश्रमी है। घर का काम करती है। फलस्वरूप एक दिन भोला दोनों को खाना देने से मना कर देता है। अतः दोनों अपने अपराध की क्षमा मांगती है और निर्णय लेती हैं कि आराम हराम है, यह गीतिनाट्य भी बच्चों के लिए लिखा होने के कारण संघर्ष और काव्यात्मकता से हीन है। इसमें उपदेशात्मक भाषा में नाटकीयता पाई गई हैं।

"अज्ञेय" :-

प्रयोगवादी कविता के कर्णधार और साहित्य में अनेक नये प्रयोग करने वाले अज्ञेय का नाम अधुनातन साहित्य में अग्रणी हैं। गीतिनाट्य की सम्प्रेषणीयता से प्रभावित होकर आपने पेतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित गीतिनाट्य "उत्तर प्रियदर्शी" की रचना की है। गहरे धरातल पर मानवीय मूल्यों की खोज इस गीतिनाट्य में की गई। शिल्प की दृष्टि से इस पर जापानी नों का नाटकों का प्रभाव है और स्वर शुध्द नाट्यधर्मी है। कथा विकास में सम्वादकों का सहारा लिया गया है। इसके कारण नाटकीय प्रभाव में कमी हुई है। काव्यत्व की दृष्टि से यह गीतिनाट्य सुंदर है लेकिन उच्चकोटि की भावाभिव्यंजना के दर्शन नहीं होते।

भागवत प्रसाद :-

यक्ष की नगरी प्रत्यक्ष की नगरी :-

यक्ष की नगरी प्रत्यक्ष की नगरी गीतिनाट्य औद्योगिक पृष्ठभूमि पर आधारित है। लेखक का दावा है कि औद्योगिक परिवेश में लिखी भारतीय भाषाओं में ये पहली काव्यवृत्ति है जो सच्चे माने में एक साहित्यिक उपलब्धि कही जा सकती है।

इस गीतिनाट्य की मुख्य विशेषता मानव के वर्तमान परिवेश को प्रस्तुत करना रहा है, जिसमें लेखक को पूर्ण सफलता मिली है। चरित्र चित्रण की दृष्टि से इसमें सफलता नहीं मिली मानसिक द्वंद अवश्य आदि से अंत तक देखने को मिलता है। घटनाओं का विवरण नेरेशन के माध्यम से किया गया है। इस गीतिनाट्य को मंच पर प्रस्तुत करना सहज संभव नहीं।

गौरीशंकर मिश्र दिजेन्द्र :-

अधुनातन पीढ़ी के प्रमुख लेखकों में गौरीशंकर मिश्र दिजेन्द्र का नाम उल्लेखनीय है। आपने दो गीतिनाट्यों का सृजन किया है। राजा परीक्षित एवं पतिम्बरा। ये दोंनों ही अत्यंत लोकप्रिय हुए हैं। काव्यतत्त्व और नाट्य तत्त्व दोनों ही दृष्टियों से राजा परिक्षित संतुलित है। इसमें कवि की भावुकता और नर की नाटकीयता का सुंदर समन्वय हुआ है। पतिम्बरा में योग और भोग के संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है। इसमें भी गीति तत्त्व और नाट्य तत्त्व का अच्छा समन्वय हुआ है।

प्रभुशंकर - अंगुलीमाल :-

प्रभुशंकर का लिखा गीतिनाट्य अंगुलीमाल मूलतः कन्नड रचना है। राजेश्वरय्या और प्रधान गुरूदत्त ने इसका हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया है। प्रकाश की अंधकार पर विजय ही इसका प्रधान उद्देश्य है। इसमें अंतः संघर्ष का अभाव है। इसमें वह व्यापकता नहीं है जितनी की गीतिनाट्य के लिए अपेक्षित होती है। अंगुलीमाल को मंच पर प्रस्तुत करने में कोई कठिनाई नहीं।

कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह "अपराजिता" :-

"अपराजिता" कुंवर चंद्रपकाश सिंह का ध्वनि रूपक है जिसमें भगवती जगदम्बा द्वारा शुंभनिशुंभ राक्षसों का वध वर्णित है। "अपराजिता" की कथा घटना प्रधान है। उसमें कहीं भी आंतरिक संघर्ष के दर्शन नहीं होते। सही माने में इस गीतिनाट्य नही कहा जा सकता। क्योंकि भाव सबलता अंतर्द्वन्द और संघर्ष इसमें हैं, ही नहीं जो कि गीतिनाट्य का प्राण होता है।

रामेश्वर सिंह काश्यप :-

रामेश्वर सिंह काश्यप साम्प्रदायिकता के श्रेष्ठतम गीतिनाट्यकारों में से हैं आपके गीतिनाट्य रंगमंच पर अभिनीत भी हुए हैं। आपकी दो रचनाएं है 1. नील कंठ निराला और 2. समाधान।

"नीलकंठ निराला" वस्तुतः काव्यरूपक है जिसमें निराला के जीवन से संबंधित घटनाओं का अंकन किया गया है।

समाधान श्रेष्ठतम गीतिनाट्यों में से है। इसकी रचना प्रारम्भ में भी मेरी शक्ति के नाम से हुई थी। इसका प्रधान विषय वर्तमान राष्ट्रीय जीवन की समस्याओं से संबंधित है।

समाधान में बाह्य और आंतरिक दोनों प्रकार का संघर्ष है। इसके पात्र प्रतीकात्मक है। ये व्यक्ति और प्रतीक दोनों है। इसमें सर्वत्र नाटकीयता और प्रेषणीयता है। समाधान पूर्ण रंगमंचीय नाटक है। काव्य तत्त्व की दृष्टि से यह सफल नाटक है। काव्य तत्त्व की दृष्टि से यह सफल रचना है। वास्तव में समाधान उन इने-गिने गीतिनाट्यों में से है जो रंगमंच और ध्वनि दोनों ही दृष्टियों से सुंदर है। इस दृष्टि से इसकी गिनती "सूखा सरोवर" अंधायुग, एक कंठ विषपायी, उत्तर प्रियदर्शी की परम्परा में की जाती है।

13167

A

आलोच्य काव्य नाटकों का सर्वेक्षण :-

अंधा कुआं - कथा वस्तु :-

अंधा कुंआ डा.लक्ष्मीनारायण कृत काव्य एकांकी है जो कि एक पांच अंकीय रचना है। प्रथम अंक का प्रारम्भ कथागायन से आरम्भ होता है जिसमें श्रीराम के जन्म और उनकी महिमा का स्मरण करके उनसे "गायक" कंठ न सूखने पाये" ऐसी विनती करता है। कथाकार कहता है कि यह कथा जलालपुरा गांव की है जिसे कोई चिरई गांव कहता है, तो कोई गया गांव। वह एक किस्सा सुनाने जा रहा है, जिसमें वह किसी की तरफदारी नहीं करेगा। आज वह भगौती और सूका के जीवन का यथार्थ, सच्ची कहानी सुनाने जा रहा है। गांव के कुछ लोग जब भी चिलम पीने अलाव तपाने या गप्प शप्प करने के बहाने एकत्र हो जाते हैं, उनमें भगौती और सूका आज भी जीवंत हो जाते हैं। भगौती का गुस्सा और उसका सूका से बदला लेना, बस यही चर्चा शुरू हो जाती है।

इसी के साथ कथाकार कथा का सूत्र दर्शकों के हाथों में दे देता है, और यहीं से वास्तविक कथा शुरू होती है। भगौती क्रोध भरी आवेशपूर्ण आवाज में अपनी पत्नी को फटकार रहा है। और एकाएक सूका की चीख और रुदन सुनाई देती हैं। भिनकुंजी भगौती का काका है, उसे रोकता है और उसे धिक्कारते हुए कहता है कि उसे लाज आनी चाहिए। और सूका की हरकत उसे बार बार नहीं करनी चाहिए। और सूका के कसूरों की जिम्मेवारी उस पर डालकर कहता है, कि उसे इस तरह सूका की जान लेने पर उतारू नहीं होना चाहिए। अगर सूका को कुछ हो गया तो उसे छठी का दूध याद आ जायेगा। और अगर उसे सूका को रोज इसी तरह प्रताड़ित करना ही था तो इतनी मुश्किल से पुलिस से छुड़वाकर पांचवी बार सूका को वापस लाया ही क्यूं? इस पर भगौती कहता है कि वह सूका से अपनी बेइज्जती का बदला लेना चाहता है। उसे जो सूझेगा वह करेगा और उसके लिए उसे ईश्वर का भी डर नहीं और अगर वह मरती

थी भी है तो मरे भगौती को उसकी कोई परवान नहीं है। इसी बीच सूका भगौती के दुर्व्यवहार के बारे में सभी को बताती है कि डेढ़ महीने पहले वह इजलास छूंटकर आई है तब से सिर्फ रोज मार खाती है। यहां तक की उसके पास बदन के कपड़ों के सिवाय दूसरे कपड़े भी नहीं है। मिनकू उस निरीह सूका को उस बेरहम के हाथों इस तरह नहीं छोड़ना चाहता। क्यूंकि वह जानता है कि सूका अगर इंदर के साथ चली जाती तो कोई रोक नहीं पाता, लेकिन सूका को रोकने और इंदर को डरायमाकर भगाने का काम मिनकु का ही है और भगौती के साथ सूका के सुखपूर्वक रहने की जिम्मेवारी भी उसकी है। साथ ही वह भगौती से कहता है, कि उस सूका को कम से कम कुछ देर के लिए यहाँ वहाँ आने देना चाहिए। भगौती कहता है कि सारी तबाहियों को छोड़कर सुकिया को घर लाने में मेरे कुन आठ सौ छत्तीस और दो हजार रूपये खर्च हुए हैं। और वह कि बात बात पर पड़ती है, और मिनखू काका जब देखो तब सूका की दुहाई देते हैं। वे उसे जानते नहीं हैं, पक्के दस सेर धान निकाल कर बेचने जा रही थी, और स्वयं भगौती ने उसे रंगे हाथों पकड़ा है। हरखू मौसिया के अनुसार मिनखू नाहक ही गोहारी दौड़े आते है। और इसके साथ ही वे (हरखू मौसिया) भगौती से कुछ नशा पानी मांगते हैं। भगौती का माई अलगू और उसकी पत्नी राजी को सूका से सहानुभूति है। लेकिन भगौती की बहन नंदो कोई न कोई बहाना बनाकर उसे पिटवाती रहती है। मूरत और तेजई गांव के दो अन्य लोगो हैं जो भगौती को अक्सर सूका के खिलाफ भड़काते हैं। इधर पर की देखभाल को लेकर भगौती और उसके भाई अलगू में मारपीट हो जाती है। भगौती उसे घर से अलग हो जाने को कहता है। पर सूका उनसे विनय करती है कि उसे इस घर में अकेली न छोड़ा जाए। और अलगू की पत्नी राजी, उसे आश्वासन देती है, कि ऐसा कभी नहीं होगा, क्यूंकि घर की वास्तविक मालकन सूका ही है।

दसरा अंक कथा गायन से आरम्भ होता है। पुनः कथा का सूत्र कथाकार के हाथों आता है, वह बताताहै, कि त्रस्त दुखी सूका पुनः घर से भागने की हिम्मत नहीं कर पाती है। इसलिए आत्महत्या के उद्देश्य से कुएं में कूद जाती

है पर उसका दुर्भाग्य कि कुआं सूखा रहता है। अंधा कुआं उसकी कोई मदद नहीं करता। गांव के लोग उसे भला बुरा कहते हैं। भगौती उसे रस्सी से कसकर, बांधकर रखना चाहता है, क्योंकि उसे संदेह है, कि मौका मिलते ही वह पुनः भागने की कोशिश करेगी। अलगू और राजी उसे ऐसा, करने से रोकते हैं। भगौती किसी की कुछ नहीं सुनता। डरा धमका कर सबको वहां से भगा देता है। आधी रात तक सूका बंधी खड़ी रहती है। रात के अंधेरे में छिपता-छिपता इंदर आता है, जो सूका का पूर्व प्रेमी है, और उसे बंधन मुक्त कराता है, किन्तु सका मना कर देती है,और पुनः उसे वैसे ही बांध देने का आग्रह करती है। इंदर उसे समझाता है कि भगौती के दारा सूका पर किये गये सभी अत्याचारों को वह अच्छी तरह जानता है। सका उससे साफ साफ कह देती है कि भगौती उसका पति है, और वह जो चाहे उसके साथ कर सकता है। सूका उसे फटकारती है, कि जब पुलिस उसे गिरिफतार कर रही थी, तब वह दूर खड़ा उसका मुंह देख रहा था, जब जलालपुर के लोग भगवान के नाम पर उसे ठग रहे थे, तब वह उसका मुंह तक रहा था, और उससे कहती है कि अगर उसने सूका को नहीं बांधा तो सूका गुहार मचा देगी। इंदर फिर भी नहीं मानता है, वह उसे किसी भी कीमत पर ले जाना चाहता है चाहे इसके लिए उसे भगोती से लड़ना भी पड़े। और जैसे ही सूका को पकड़ना चाहता है सूका शोर मचा देती है, दौड़ो दौड़ो चोर-चोर। सभी लोग दौड़े आते है और इंदर भाग जाता है।

तीसरा अंक कथा गायन से प्रारम्भ होता है। एक बार पुनः कथाकार कथा के सूत्र जोड़ता कथा को आगे बढ़ाता है। वह बताता है, कि अलगू और भगौती में बंटवारा हो जाता है। इस पर सूका रोने धोने को व्यर्थ मानकर स्थिति से समझौता करने की कोशिश करती है। भगौती सूका के सजने धजने पर शक करता है। उसका मन सूका की ओर आकर्षित होता है। परन्तु फिर भी डरने आंखे नीचे करके चलने को कहता है। लेकिन सूका मना कर देती है और कहती

है, कि वह आखें नीचे नहीं करेगी और माथा उठाकर देखेगी। एक बार पुनः कथाकार अवतरित होता है, और कथा गायन के माध्यम से वह बताता है, कि सूका पर इतने अत्याचार करने के बाद भी भगौती का जी नहीं भरता है, और वह सूका के कलेजे पर मूसल चलाने के लिए एक सौत ले आता है। परन्तु दांव उल्टा पड़ता है। सूका अपनी सौत को अपनी छोटी बहन सा प्यार देती है। दोनों, हंसमिलकर रहती हैं, वह भी भगौती को गंवारा नहीं होता है। वह उन्हें डांटता, डपटता रहता है। मिनकू उसे समझाते हैं, कि उसने दूसरी लाकर ठीक नहीं किया है। और उनसे इस तरह बदनामी नहीं सही जाती। और वे इस बिखराव का कारण हरसू जैसे लोगों को ठहराते है। तेजई और मूरत भगौती की दूसरी ओर से हंसी मजाक करना चाहते है, पर सूका उन्हें इसका मौका नहीं देती है। सूका के बदनपर नयी साड़ी देखकर भगौती भड़क जाता है, और उसे पूछता है, कि कैसे खरीदी है और वह बताती है, अनाज बेचकर। भगौती उसे अंदर ले जाकर उसे नई साड़ी उतरवाता है और कहता है कि उसे सिर्फ लच्छी की तरी हुई साड़ी पहननी होगी।और लच्छी से कहता है कि वही इस घर की मालकिन है, वह सूका के साथ उठे बैठे पर उसके साथ मेल जोल न बढ़ाये, और अगर सूका लच्छी के खिलाफ एक कदम भी चले तो वह उसे डांटे और उसे खाना खाने को न दे। लच्छी यह सब देखकर रो पडती है। सका उसे समझाते हुए कहती है, तू मत रो, रोने के लिए मैं हूँ। लच्छी भगौती को बिल्कुल पसंद नहीं करती हैं। इधर भगौती तेजई मूरत से इंदर के घर में आग लगवा देने को कहता है। लच्छी किसी दूसरे पुरुष से प्रेम करती है। सूका उसकी मदद करती है। वास्तव में माधोपुर वाले के साथ लच्छी का विवाह पक्का हो चुका था। लगन चढ़ गयी थी। इधर उधर हल्दी घूम गई थी, लेकिन उसके काका ने उसका बेड़ा डुबोया। तेजई और मूरत ने माथा दिखाकर उसका विवाह भगौती से करवा दिया। सूका इंदर के घर जलने की बात सुनकर भी कुछ नहीं कहती है और लच्छी को बताती है कि किस तरह इस घर से तबाह होकर अच्छे के लिए वह इंदर के संग भागी

थी, पर वह भी आदमी न निकला। इसलिए वह निश्चित करती है कि हीरा (लच्छी के प्रेमी) को यहां बुलवायेगी सौगंध दिलवाकर सब बातें पूछेगी, क्योंकि वह नहीं चाहती कि उसकी तरह लच्छी भी दर दर की ठोकरें खाए। वह लच्छी को अपनी बेटी मान लेती है। पूर्णमासी के दिन जब हीरा आता है तो उसे भारी मन से हीरा के साथ बिदा कर देती है और उसे आशीर्वाद देती है कि इस घर का साया भी उस पर न पड़े।

चौथा अंक पुनः कथा गायान से शुरू होता है। माता शारदा की स्तुति के बाद कथाकार कहता है, कि लच्छी जो गई तो फिर न मिली। भगौती ने उसे पाने के लिए क्या क्या न किया पुलिस, हाकिम, जादू टोना, ओझा सोखा पर कुछ न हुआ। मौका पाकर ऐसी हालत में इंदर ने भगौती को बहुत मारा और दायीं टांग तोड़ दी। भगौती ने खाट पकड़ ली। सूका जी जान से उसकी सेवा करती है, किन्तु अंतर में भगौती के किये गये अत्याचारों का ज्वालामुखी धधकता रहता है। वही भगौती जिसने उसे मारने के लिए क्या क्या न किया वही सूका उसे जिलाने के लिए क्या क्या नहीं कर रही है। दवा, दान, पुण्य किसी चीज की कसर नहीं छोड़ती है। यही नहीं नन्दो जिसकी अब शादी हो चुकी हैं और जो एक समय सूका के जान की दुश्मन थी उसकी भी सूका वैसी ही देखभाल करती है। भगौती सोचता है कि लच्छी को भगाकर सूका ने उससे बदला लिया है। इंदर की चोट से घायल भगौती बिस्तर पर पड़ गया है, यह भी एक बदला ही है, कि कभी सूका उसकी दया पर जी रही थी , आज भगौती को उसकी दया पर जीना पड़ रहा है।

भगौती को असहाय हालत देखकर सूका रो पड़ती है। अलगू उसे दिलासा देते हुए सब ठीक हो जाने की बात करता है। सूका का भगौती के लिए रोना, भगौती को उसका "तिरयाचरित" लगता है। जब से भगौती ने खाट पकड़ी है, उसके साथियों ने आना बंद कर दिया है। घायल, असहाय भगौती सूका से उसकी कटार, गंडासा या लाठी कुछ भी लाकर देने को कहता है, ताकि

अगर कभी इंदर आ जाये तो वह उस पर आक्रमण कर सकता है। सूका उसे बहाना बनाकर कुछ भी नहीं देती हैं। नंदो ससुराल में सास ससुर से पीड़ित है। वह भागौती के घर ही अक्सर पड़ी रहती है। भगौती को उसका वक्त बेवक्त घूमता अच्छा नहीं लगता। एक बार आवेश में आकर वह नंदों को मारने उठता है किन्तु सूका यह कहकर कि वह पराये घर की लड़की पर हाथ नहीं उठाने देगी, बीच में आ जाती हैं।

एक रात हाथ में नंगी तलवार लिये, इंदर भगौती को खत्म करने के इरादे से आता है। सोती हुई सूका आहट सुनकर चौंक जाती है। इंदर को इस तरह आया देखकर वह भागकर मगौती के पायताने बिस्तर के नीचे छिपे गंडासे को निकालकर इंदर को ललकारती है। इंदर उसे चुप रहने के लिए कहता है, वह उससे कहता है, कि वह आज भगौती को जान से खत्म करके सूका को आजाद कराने आया है। लेकिन सूका उससे विनय करते हुए कहती है कि वह ऐसा न करे क्योंकि वह विधवा हो जायेगी। और खबरदार उसने जो कदम आगे बढ़ाया तो। वह इंदर को नामर्द कहती है, जो एक घायल कर हमला करना चाहता है, लेकिन भगौती घायल जरूर है पर बेआसरा नहीं है। इंदर सूका के हाथों से गंडासा छीनने के लिए झपटता है, पर सूका उस पर गंडासा चला देती है। उसका बांया हाथ कट जाता है और इस शोरगुल से भगौती जाग जाता है। घायल इंदर फिर भी सूका के हाथ से गंडासा छीनना चाहता है। सूका के दोनों हाथ घायल हो जाते है उनसे खून निकलने लगता है, पर फिर भी वह गंडासा दोनों हाथों से पकड़े रहती है और कहती है, कि उसके जिंदा रहते वह भगौती को नहीं मार सकता। इधर भगौती प्रयत्न करके अपनी खाट से उठता है और अपनी सारी पीड़ा भूलकर इंदर की ओर बढ़ने लगता है। उसी समय इंदर सूका से गंडासा छीन लेता है। भगौती इंदर को अपने ऊपर आक्रमण करने को कहता है क्योंकि इंदर का दुश्मन भगौती है, सूका नहीं। इंदर भी यही चाहता है कि भगोती को मारकर सूका को ले जाये। और दोनों हथियारों से एक साथ

भगौती पर आक्रमण करना चाहता है, लेकिन सूका बीच में आ जाती है। इंदर के दोनों वार सूका पर सही उतरते हैं, वह वहीं भगौती के सीने पर करुण कराह के साथ ढेर हो जाती है। इंदर सूका की इस हालत को देखकर पागल सा हो जाता है, और मजबूती से उसके दायें पांव को अपनी बाहों में जकड़ लेता है, जैसे किसी ने उसे बांध दिया हो।

भगौती सूका को अपने सीने से जकड़े हुए चिल्लाता रह जाता है कि उसने अपनी सूका को मार डाला। लाठी लिए हुए अलगू दौड़ा आता है उसके पीछे मिनकू और गांव के कई लोग लाठी लिये हुए दौड़े आते हैं और चारों ओर से इंदरको घेर लेते है, लेकिन इंदर वैसे ही सूका के पांव से अपने को बांधे हुए खड़ा रहता है, और भगौती करुण आवाज में कहता है खूनी मैं हूँ काका, सूका का खून मैंने किया है।

नाटक के समापन पर फिर कथाकार अवतरित होता है और बताता है कि जलालपुर में घटी भगौती और सूका की कथा जैसी घटी थी, वैसी उसने उन सबको सुना दी। पर यह कहानी तब तक पूरी नहीं होगी जब तक वह एक बात और नहीं बता देता और वह कि भगौती मरा नहीं, वैसे ही सूका भी मरी नहीं। भगौती अब भी अपने सूने पर आंगन को निहारता है और दरवाजे पर बैठे बैठे अपनी आंखों से देखता है, मानो सूका आई है और उसी खामिया को पकड़कर हंस रही है।

अंधा कुआँ - एक अवलोकन :-

अंधा कुआँ नाटक भारत के गांव के सामाजिक आर्थिक विपन्न जीवन का यथार्थ चित्र है। तीस से अधिक वर्ष हो चुके हैं इस देश को स्वतंत्र हुए, लेकिन गांव का जीवन अभी भी वैसे का वैसा ही है। शिक्षा का प्रसार भी हुआ है, फिर भी अभी तक नारी का स्वतंत्र व्यक्तित्त्व परम्परागत रूढ़ियों में डूबे हुए समाज को सह्य नहीं। अंधा कुआँ नाटक में कमालपुर गांव की पृष्ठभूमि में एक किसान दम्पत्ति, भगौती और सूका के विषम जीवन को लेकर पुरूष द्वारा नारी के प्रति होने वाले अन्याय को दर्शाया गया है। यह नाटक पारिवारिक जीवन में {विशेषकर गांव के} नारी की मजबूरी उसके प्रति सहानुभूति की भावना, और ग्रामीण नारी जाति के जीवन यथार्थ के कारुणिक चित्रण का नाटक है।

"अंधा कुँआ" नाटक की कथावस्तु एक ऐसे परिवार की कहानी है, जिसमें नारी पर अन्याय और अत्याचार के प्रहार निरंतर होते रहते है। नाटक की सूका अपने पति के अत्याचारों से तंग आकर इन्दर नामक किसी व्यक्ति के साथ भाग जाती है। उस पर अत्याचार ढहानेवाला व्यक्ति उसी का पति भगौती है। भगौती पुलिस की सहायता से सूका को फिर अपने घर लाकर, अपने अत्याचार की सीमा को और अधिक बढ़ा लेता है। स्वयं वह किसी दूसरी औरत को घर बिठाए हुए है। सूका इस अत्याचार को प्रेम में बदल देती है, अपनी सौतन लच्छी को छोटी बहन सा प्यार देती है और उसके भविष्य की चिंता से प्रेरित होकर उसे उसके प्रेमी के साथ भाग जाने में सहायता करती है।

सूका अपने पति भगौती की मारपीट और आए दिन के उसके हिंसक बर्ताव से तंग आकर आत्महत्या कर लेना चाहती है। लेकिन जिस कुंए में वह छलांग लगाती है, वह कुंआ सूखा है और वह मरने से बच जाती है। भगौती आत्मग्लानि का एहसास करने की बजाय उसे चारपाई के पांवे से बांधकर लोहे की गर्म सलाख से दागना चाहता है। लेकिन वह अपने भाई अलगू के बीच में आ जाने से ऐसा कर नहीं पाता है। एक बार फिर सूका का प्रेमी उसे दीवार

फांदकर भगा ले जाने आता है, तो सूका उसे गहरी फटकार देती है। इतना ही नहीं वह चोर चोर चिल्लाकर उसे मगौती द्वारा पकड़वाना चाहती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है, कि आज के गांव की नारी अभी भी अपने पति के प्रति कितनी समर्पित है और पति अभी तक उसे पांव की जूती समझता है।

"अंधा कुआँ" से सूका को बचाकर नाटककार नारी के प्रति इस संवेदना को अभिव्यक्ती दे रहा है कि इस हृदयहीन समाज में यातना सहकर भी नारी को फिर उसी अन्यायी समाज की शरण लेनी पड़ती है। वह यातनामय जीवन बिताने के लिए वापस लौटने के लिए अभिशप्त है, सूका ने अलगू को मुखातिब होकर नारी की इसी यातना की पीड़ा को इस प्रकार लक्षित किया है -

"इन रस्सियों को तैयार करने वाले और इनसे गांठ बनाने वाले जब तक वे हाथ मौजूद है तब तक केवल इन रस्सियों को कुछ नहीं होगा कुछ नहीं होगा बाबू।"[1]

भगौती किसी झगड़े में घायल हो जाता है। सूका सच्चे दिल से उसकी सेवा करती है। यहाँ तक कि भगौती को बचाते हुए वह अपने प्राणों तक को दे देती है।

"समझा क्या था। नामर्द कहीं का। यह घायल है, लेकिन बेआसरा नहीं है।"

मेरे जिंदा रहते तू उसे नहीं मार सकता। तेरा खून पी लूंगी। नहीं नहीं यह नहीं हो सकता। मेरे जीते जी यह नहीं हो सकता।[2]

सूका का पूर्व प्रेमी इंदर दोनों हथियारों से जमीन पर गिरे घायल मगौती पर चोट करता है। परन्तु अपने पति को बचाने के लिए सूका बीच में आ जाती है। और इंदर के उठे हुए बार सूका पर सही उतर जाते हैं, और वह करुण कराह से भगौती के सीने पर बिखर जाती है।

नाटककार ने सूका और भगौती की कथा दारा यह दर्शाया है कि, कि गांव में अभी भी कितनी ऐसी सूकाएं है, जो इस प्रकार के भगौतियों की यातना को झेलती हुई भी इस प्रकार के गृहस्थ के अंधे कुएं में नारकीय जीवन बिता रही हैं। सूका के शब्द इसे और अधिक संवेदना के स्तर पर उजागर करते हैं -

"अंधा कुंआ यही है, जिसके संग मैं ब्याही हूं। जिसमें एक बार मैं गिरी कि फिर न उभरी और न कभी निकल ही पाउंगी। बस धीरे धीरे इसी में चुककर मर जाऊंगी।"[3]

नाटक के अंत में भगौती के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। सूका के सेवाभाव से प्रभावित होकर वह अपने दुष्कर्मो के लिए आत्मग्लानि एवं पश्चाताप का अनुभव करता है। नाटककार यह प्रश्न उठाता हैं, कि हमारा ग्रामीण समाज अभी भी अंधविश्वासी बना हुआ अर्थहीन मध्ययुगीन मान्यताओं में जी रहा है। समाज अभी नारी के प्रति अन्याय को उसके पति का जन्मजात हक मानता है। नाटककार "लाल" ने इस नाटक मे गांव के सामाजिक - आर्थिक जीवन की दयनीय स्थिति का सजीव और यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। बहुत पहले गांव में नगर की अपेक्षा जो सहानुभूति और दयाभाव का गुण था, वह अब नहीं रहा। ईर्ष्या, द्वेष और अंधविश्वास तथ नये तिकड़मी जीवन के प्रभावान्तर्गत वहाँ भी अवगुण प्रवेश पा गए हैं। सूका के शब्दों में नाटककार ने इसी सामाजिक कुरीति के विरूध्द, नयी संवेदना के संदर्भ में सोचने की प्रेरणा दी है - "लोग कहते हैं मेरी कोख अंधी है, इसलिए जब मैं मरने भी गई तो मुझे मेरे करम में अंधा कुंआ ही मिला। पर मैं समझती हूँ, वह कोई कुआं न था, वह था गांव का झूठ।"[4]

यह नाटक नारी और पुरुष (पति पत्नी) के सबंधों में मान्यता प्राप्त क्रियाशील पारम्परिक पुरुषाधिकारी की चेतना का खंडन है। नाटककार ने नारी ओर पुरुष के इन संबंधों के द्वंद और नारी की पहले जैसे पतिभक्ति वाली चेतना

को बदलने का संकेत दिया है। यही नयी चेतना है, जिसे नाटककार ने संवेद्य बनाकर नाटक के रूप में प्रस्तुत किया है, ताकि नारी के प्रति हो रहे अन्याय के विरोध में हम नये भावबोध से काम लें। दूसरें शब्दों में भारत के गांव में नारी के प्रति पुरुष के पारम्परिक दृष्टिकोण को नकार कर नये जीवन मूल्य को स्वीकारने की प्रेरणा दी गई है।

"अंधा युग" (कथा वस्तु) :- डॉ॰धर्मवीर भारती

"अंधायुग" में महाभारत के अठारहवें दीन की संध्या से लेकर प्रयासतीर्थ में कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक की प्रस्थान कथा अंकित की गई है, किन्तु कुछ प्रसंग उत्पाद्य भी है। लेखक ने स्वकल्पित पात्र एवं घटनाओं का भी वर्णन किया है। प्रस्थात कथा के संयोजन में जहाँ एक ओर महाभारत का आश्रम लिया गया है वहीं विष्णु पुराण से भी सहायता ली गई है। इस पर टी॰एस॰इलियट की वेस्टलैंड कविता का भी प्रभाव पड़ा है। सात्रे के "लमोचे" नामक नाटक में इसी प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं।

"अंधायुग" की कथावस्तु उस मर्यादाहीन युग से संबंधित है, जिसमें कुण्ठा, निराशा, विकृति , कुरूपता और अंधापन अपने पूर्ण अंगों के साथ अवतरित हुए थे। भारतीजी का प्रधान उद्देश्य इसी विकृति का चित्रण करना रहा है। लेखक ने पेतिहासिक तथ्यों, कल्पना, जीवनदर्शन और चिंतन को अपने ढंग से संजोया सम्भाला है।

अंधायुग का सम्पूर्ण कथानक पांच अंकों में विभक्त है, जिन्हें प्रतीकात्मक शीर्षकों द्वारा नामांकित किया गया है, जैसे पहला अंक - कौरवनगरी, दूसरा अंक - पशु का उदय, तीसरा अंक - अश्वत्थामा का अर्धसत्य, अंतराल - पंख पहिये ओर पट्टीयाँ, चौथा अंक - गांधारी का शाप, पांचवा अंक - विजय एक क्रमिक आत्महत्या आदि। प्रारम्भ में स्थापना और अंत में समापन है।

स्थापना में मंगलाचरण के साथ उद्घोषणा की गई है। प्रथम अंक का प्रारम्भ कथा गायन से होता है। जिसके द्वारा नाटक की पृष्ठभूमि तैयार की

गई है। कथागायान के बाद पर्दा उठता है और दो प्रहरी हमारे सम्मुख आते हैं, जो आपस में महाभारत के युध्द और उससे उत्पन्न अन्य स्थितियों का वर्णन करते हैं। और अपने व्यर्थ और अर्थहीन जीवन की पीड़ा को शब्द देते हुए कहते हैं।

अर्थ नहीं था, कुछ भी अर्थ नहीं था,
जीवन के अर्थहीन सूने गलियारे में
पहरा दे-देकर अब थके हुए हैं हम
अब चुके हुए है हम।[5]

प्रथम अंक के अंत में, प्रहरी अपने मर्यादाहीन, आस्थाहीन, उद्देश्यहीन जीवन की निस्सारता की बातें करते हुए स्वयं को मात्र अंधे राजा की आज्ञपालन करने वाला कहते हैं। जिन्हें मरने के बाद भी इसी तरह यम के गलियारे में भी सदा दाये से बायें, बायें से दायें चलते रहना होगा।

"पशु का उदय" नामक दितीय अंक पुनः कथागायन से प्रारम्भ होता है। जिसमें संजय का परिचय दिया गया है।

संजय पराजय की लज्जा व पीड़ा से दुखित, हस्तिनापुर का मार्ग मूल कंटकवन में भटक गये हैं। अंतिम पराजय के अनुभव के वर्णन में शब्दों की अपूर्णता महसूस हो रही है। संजय की भेंट मार्ग में कृतवर्मा से होती है, जो उन्हें धैर्य बंधाते हैं। संजय दुर्योधन की विपन्न, असहाय, दुखित अवस्था का स्मरण करके दुखी होते हैं, और स्वयं को उस समाचार को कौरवनगरी में पहुंचाने में अपने को असमर्थ पाते हुए प्रस्थान करते हैं।

वहीं कृपाचार्य अश्वत्थामा को पुकारते हुए आते हैं और कृतवर्मा को जीवित पाकर उसे बताते हैं कि कौरव पक्ष से केवल तीन व्यक्ति ही शेष जीवित

रह गये हैं। वे बताते है कि राजा दुर्योधन को पराजय स्वीकार करते देख अश्वत्थामा अपना धनुष तोड़ देता है, और आर्तनाद करता हुआ वन की ओर चला गया है।

इधर दूसरी ओर अश्वत्थामा पश्चाताप् करता हुआ अपने टूटे हुए धनुष को देखकर अपने टूटे मनोबल की तुलना उससे करता है, और स्वयं को अपने पिता के धोखे के किये गये वध का बदला लेने में असमर्थ महसूस करता है। युधिष्ठिर के अर्धसत्य " नर या कुंजर" के कारण ही उसके पिता जो अपराजेय थे, उनका वध घृष्टद्युम्न करता है, और इसी अर्धसत्य ने अश्वत्थामा के अंतर में प्रतिहिंसा के पशुत्व का उदय होता है। और वह अपने अस्तित्व की सार्थकता केवल वध करने में ही पाता है और इसी प्रतिहिंसा के उद्वेग में वह संजय पर अंजाने में घातक आक्रमण करता है, कृतवर्मा व कृपाचार्य उसे पकड़ते हैं, और संजय को छुड़वाते है। संजय अश्वत्थामा से विनय करता है, कि वह उसका वध कर दे, क्योंकि अंधो से जाकर पराजय का सत्य कहने की मर्मांतक पीड़ा से उसे वध ज्यादा सुखमय प्रतीत होता है। दुखी व विविश अश्वत्थामा अपने अंतर में उत्पन्न मनोग्रंथि से अविभूत होकर प्रेसा करता है और स्वयं को असहाय अनुभूत करता है और प्रतिहिंसा के इसी पागलपन में उसी वृध्द याचक की हत्या कर देता है। वह वास्तव में उस भविष्यका वध करना चाहता था। कथागायान के साथ "पशु का उदय" अंक का समापन होता है। कथागायन के माध्यम से यह बताया गया है, कि विजय और पराजय के बाद क्रमशः पांडवों और अश्वत्थामा और दुर्योधन की क्या स्थिति होगी।

तीसरा अंक अश्वत्थामा का अर्धसत्य कथागायन से प्रारम्भ होता है, जिसके माध्यम से यह बताया जाता है, कि संजय जब कौरव नगरी पहुंचकर सारी कथा सुनाते है तो गांधारी शोकहत मृतप्राय सी हो जाती है, और सारा नगर हिल उठता है, दूसरे दिन आहत, खंडित, विखंडित, जर्जर अठ़ारह दिन बाद लौटती सेना का वर्णन है। धृतराष्ट्र विदुर से कहते हैं कि जो आज तक

वे संजय के शब्दों के माध्यम से सुनते आये है, उसे आज उन्होंने छू छूकर देखा है।

अंगभंग सैनिकों को देखकर उन्हें ऐसा लगता है, मानों उनके सिंहासन के हत्थे कट गये हों। आज उन्होंने युध्द की छूकर उसकी विभीषणता को अनुभव किया है। इसी बीच एक पंगु गूंगा घायल सैनिक विदुर से पानी की याचना करता है। वह अपनी कटी जिह्वा से धृतराष्ट्र की जय कहता है। यहाँ धृतराष्ट्र एक कटु यथार्थ कहते हैं कि -

गूंगो के सिवा आज
और कौन बोलेगा मेरी जय।[7]

पुत्रशोक से अत्याधिक पीड़ित गांधारी सीढ़ी पर पत्थर सी जड़वत बैठी हैं। धृतराष्ट्र चिंतित है भीम और दुर्योधनके अंतिम दंद युध्द का निर्णय जानने के लिये।

अचानक पूरे नगर में आतंक सा छा जाता हैं, कि कोई दैत्याकार अस्त्रों से सुसज्जित विपक्षी योध्दा भी हारी घायल सेना के साथ नगर को लूटने के लिए प्रवेश कर रहा है। विदुर उसे स्वयं अपनी आँखों से देखने जाते हैं, वह वास्तव में युयुत्सु है। जो धृतराष्ट्र पुत्र है, किन्तु उन्होंने युध्द में युधिष्ठिर के पक्ष से भाग लिया था। युयुत्सु, अपने आपको सिर्फ इसलिए दोषी ठहरा रहे है, कि वे सत्य के पक्ष पर अटल रहे, क्योंकि उनकी दृष्टि में सत्य कौरव वंश से बड़ा था। युध्द के उपरांत कौरवनगरी में लौटने पर उन्हें चहूंओर से घृणा ही मिलती है और वे सोचते हैं -

मैं भी सह लेता यदि सब उच्छृंखलता दुर्योधन की
आज मुझे इतनी घृणा तो न मिलती अपने ही परिवार में
माता खड़ी होती बांह फैलाये
चाहे पराजित ही मेरा माथा होता।[8]

दुखित युयुत्सु को विदुर समझाते हुए कहते हैं कि, कौरवपुत्रों की इस कथा में एक वही हैं, जिसका माथा गर्वोन्नत है। युयुत्सु दुखी है, कि नगर वासियों ने उसे मायावी, शिशुभक्षी दैत्याकार गिध्द की उपाधि दी। विदुर उससे कहते हैं, कि उसे इस बातपर विषाद नहीं करना चाहिए क्यूंकि जो व्यक्ति एक निश्चित परिपाटी से पृथक होकर स्वयं अपना पथ निर्धारित करते हैं, साधारणतः अज्ञानी और भय में डूबे हुए लोग उन्हें हमेशा यही प्रतिकार देते हैं। युयुत्सु जब गांधारी का चरण स्पर्श करते हैं, तो माता गांधारी उन्हे बंधुहत्या ठहराते हुए व्यंग्य वाणों से बींध देती है। और स्वयं को उसके शत्रुओं की माता ठहराती हैं, और वहां से चल जाती हैं। युयुत्सु सोचता है, कि अगर वह असत्य से समझौता कर लेता तो शायद उसके साथ पेसा व्यवहार नहीं होता। लेकिन विदुर कहते है असत्य से समझौता करने से आत्मा जर्जर हो जाती है और उस गहन पीड़ाओं को शांति से सहन करने को कहते हैं। दम तोड़ते गूंगे सैनिक को जल देने के लिए जब युयुत्सु प्रयत्न करते हैं तब वह सहसा चीख पडता है, गिरता पड़ता घिसलता भागता है। इसके लिए युयुत्सु स्वयं को ही दोषी ठहराते हैं, और सोचते हैं कि व्यास ने कहा था कृष्ण जिधर होंगे जय उधर ही होगी। तो यह कैसी विजय है, मैं वचिक मातृवंचित और घृणा का पात्र बन गया हूँ। सहसा अंतः पुर में भयंकर आर्तनाद होता है। पीछे से घोषणा होती है द्वंद युध्द में महाराज दुर्योधन पराजित हुए। इधर वनपथ पर कृतवर्मा कृपाचार्य से कहते हैं कि विजित पांडव शंखध्वनि करते हुए अपने शिबिर की ओर लौट रहे हैं। अश्वत्थामा छद्मवेश धारण कर दुर्योधन और भीम का द्वंद युध्द देखने जाता है, जहाँ राजा दुर्योधन भीम के हाथों अधर्म से मारे जाते हैं। बलराम श्रीकृष्ण से कहते हैं, कि यदि पांडव तुम्हारे संबंधी है तो कौरव भी शत्रु नहीं हैं। वे भीम के अन्याय पर क्रोधित होते हैं, और कृष्ण को मर्यादाहीन कूटबुध्दि कहते हैं, और यह कहते हैं कि निश्चित रूप से पांडव भी अधर्म से मारे जायेंगे। अश्वत्थामा प्रण करता है, कि वह पांडवों को निर्मूल कर देगा। धृष्टद्युम्न के अधर्म से द्रोण को

मारने और भीम के दुर्योधन को माने की प्रतिहिंसा में वह अपने को बिल्कुल अकेला पाता है। और कृपाचार्य से प्रार्थना करता हैं, कि जब तक दुर्योधन जीवित है उसके सम्मुख, वे उसे सेनापित घोषित करा दें, और उसके पश्चात् वह स्वयं प्रतिशोध का पथ ढूंढ लेगा। दुर्योधन जल की अनुपस्थिति में स्वेद से ही उसका अभिषेक करते हैं, और आशीर्वाद देने के लिए जब अपने निर्जिव हाथ ऊपर उठाते है, तो उनके मुख से हृदयविदारक चीख निकल जाती है, और अश्वत्थामा से कहते हैं, कि जब तक वह उन्हें अपने प्रतिशोध का सम्वाद नहीं देगा तब तक वह जीवित रहेगा। जब कृतवर्मा कृपाचार्य विश्राम करते हैं, तक अश्वत्थामा धनुष्य लेकर पहरा देता है। रात के गहन अंधकार में सोते हुए कौए पर एक उलूक टूट पडता है, और फिर टूटे पंखों और खून से लथपथ पंजो से उसे पांडवों के वध की प्रेरणा मिलती है और वह नींद में निहत्थे अचेत सोते पांडवों का वध करने अकेला निकल पड़ता है। कृपाचार्य और कृतवर्मा उसे पुकारते ही रह जाते हैं।

इसके बाद अंतराल है। जिसमें वृध्द याचक युयुत्सु संजय विदुर को बड़ी ही नाटकीय एवं प्रतीकात्मकता के साथ छायारूप में उतारा है, जो मूल्यहीनता के लिए स्वयं को उत्तरदायी मानते हैं। इसके पूर्व वृध्द याचक का लम्बा कथन है, जो तत्कालीन परिस्थितियोंपर सुंदर व्यंग्य करता है।

युयुत्सु स्वयं को गलत धुरी में लगा हुआ पहिया सामने हैं। संजय स्वयं को कर्मलोक से बहिष्कृत दो पहियों के बीच निरर्थक शोभाचक्र मानते है जो पहिये के साथ घूमता है, पर स्वयं पहिये नहीं घुमा सकता न रथ को आगे बढ़ा सकता है, न धरती को छू सकता है। और उसका सबसे बड़ा दुर्भाग्य कि न वह अपनी धुरी से उतर सकता हैं, और संसार की स्थितियों को असाधारण मानते हैं। स्वयं को कृष्ण अनुयायी भक्त और साधारण नीतिज्ञ मानते हैं, और संसार की स्थितियों को असाधारण मानते हैं। स्वयं को संशय में पाते है, किन्तु वे संशय को पाप समझते हैं, और वे स्वयं को इस पाप में नहीं पड़ने देना

चाहता। कृष्ण का रथ हस्तिनापुर से लौटकर पांडवों के शिबिर की ओर जाता है, किन्तु उससे तीव्र गति से चलता, अश्वत्थामा का रथ उनसे पहले पांडवों के शिबिर के पहुंच जाता है। किन्तु वहाँ अश्वत्थामा का मार्ग एक विराटकाय दैत्यपुरूष चट्टानों की तरह रोक लेता है।

चौथा अंक "गांधारी का शाप" कथागायन से प्रारम्भ होता है, जिसके माध्यम से उसे दैत्यपुरूष का वर्णन किया जाता है, जिसने अश्वत्थामा का मार्ग रोक लिया था, वे और कोई नहीं भगवान शंकर थे जो अश्वत्थामा को चुनौती देते हैं, कि उसे पहले उन्हें जीतना होगा, तभी वह अंदर जा सकेगा। भयानक युध्द करने के बाद जब अश्वत्थामा उन्हें जीत नहीं पाता है, तो उनकी वंदना करने लगता है। तब भगवान शिव उसे विजयी होने का आशीर्वाद देते हैं और कहते हैं पांडवों के पुण्यों का क्षय हो चुका है और अधर्म वध करने स्वयं पांडवों ने अपने मृत्युद्वार खोले है, और उसके पश्चात पांडवों के शिबिर में अश्वत्थामा भी बना नरसंहार करता है, जिसका वर्णन संजय के माध्यम से करवाया गया है। इस नरसंहार से गांधारी प्रसन्न है और प्रसन्न क्यो न हो जो उसके सौ पुत्रों ने न कर पाया, द्रोण और भीष्म न कर पायें वह अश्वत्थामा ने दिखाया। गांधारी संजय से उसकी दिव्य दृष्टि के माध्यम से अश्वत्थामा को दिखाने की प्रार्थना करती है। संजय अपने सारे पुण्यों का बल समवेत कर उन्हें दिव्य दृष्टि प्रदान कर देता है, क्योंकि उनमें घायल मर्णोन्मुख दुर्योधन को देख पाने की सामर्थ्य नहीं है। और इसी बीच दुर्योधन सांस तोड़ देता है। अश्वत्थामा माता गांधारी को आश्वासन देते हुए कहते हैं, कि जिस तरह उनकी, कोख कृष्ण के कारण पुत्रहीन हो गई है, वे भी उत्तरा को पुत्रहीन कर देगा। गांधारी अपने आंखों से पट्टी उतारकर अश्वत्थामा के शरीर को वज्र का बना देना चाहती है, इसी बीच संजय की दिव्य दृष्टि समाप्त हो जाती है। इसके बाद सभी मृतकों का तर्पण करने के लिए कौरव नगरी छोड़कर चल देते हैं। कथा गायन के माध्यम से इसका वर्णन कराया गया है। किन्तु युयुत्सु को मार्ग में ही छोड़कर, धृतराष्ट्र, विदुर, संजय, गांधारी

जंगल की ओर प्रस्थान करते है, किन्तु वहाँ उन्हें दावाग्नि घेर लेती है। इसके पश्चात अश्वत्थामा द्वारा ब्रहमास्त्र का प्रयोग और उससे जनित परिणामों का बड़ा ही हृदय विदारक वर्णन है। अश्वत्थामा का यह ब्रहमास्त्र उत्तरा के गर्भ को खंडित कर देता है, किन्तु कृष्ण उसे पुनः जीवन दान दे देते हैं। यहीं नहीं वे अश्वत्थामा के कुकृत्य से क्रुध्द होकर उसे भ्रूण हत्या का शाप दे देते हैं। जिसके फलस्वरूप उसके सारे शरीर में फोड़े, घाव, पीप भर जाती है और वह रौख, पीड़ा भोगने लगता है।

इसी अंक में गांधारी अपने पुत्र के कंकाल को देखकर कृष्ण को शाप देती है कि तुम्हारा सारा वंश पागल कुत्तों की तरह एक दूसरे को फाड़ खायेगा और तुम स्वयं साधारण व्याध के हाथों मारे जाओंगे। कृष्ण इस शाप को स्वीकार कर लेते है और जिस क्षण से शाप स्वीकार करते है, उसी क्षण से युग की मर्यादा निष्प्राण हो जाती है। कृष्ण के शाप स्वीकार करने पर गांधारी फूट फूटकर रोने लगती है और कृष्ण से शाप अस्वीकार करने की बात कहती है और स्वयं को दुखी पुत्रहीना निराश और कटु ठहराती है, किन्तु कृष्ण उनसे कहते हैं, कि जब तक वे जीवित है, उन्हें स्वयं को पुत्रहीना समझने की आवश्यकता नहीं। वे उनकी माता और कृष्ण उनके पुत्र है।

और जैसे ही कृष्ण शाप स्वीकार करते है। वैसे ही युग युग की संचित मर्यादा निष्प्राण हो जाती है, सितारों की ज्योति मंद हो जाती है। कवियों की वर्ण छंद योजना सब धूमिल हो जाती है। किसी ने माता गांधारी से कुछ कहा तो नहीं किन्तु उस सभी के मन को यह श्राप आहत कर गया।

पंचम अंक, विजय एक क्रमिक आत्महत्या का आरम्भ कथागायन से होता है। इस बंक में युध्दोपरांत निराशा का वर्णन है। कथागायन से युध्दोपरांत पांडव राज्य की स्थापना का उल्लेस है। कौरव नगरी के युधिष्ठिर का राज्याभिषेक होगा। विजय के उपरांत भी युध्द की काली छाया से सारी नगरी शोभा हीन

प्रतीत होती थी। पांडवों में अकेले युधिष्ठिर ही ऐसे थे जो भावी विकृत युग सांचे में ढली प्रवृत्ति और भावी अमंगल युग की कल्पना के कारण उन्हें विजय की अपूर्ण प्रतीती हो रही थी। इसी बीच भीम युयुत्सु का अपमान करता है। विदुर और कृपाचार्य के युधिष्ठिर के साथ वार्तालाप से ज्ञात होता है कि भीम की कटुक्तियों से भयावह होकर धृतराष्ट्र और गान्धारी वन में चले गए हैं और तभी युयुत्सु को आश्वस्त करने के लिए चले जाते हैं तभी दोनों प्रहरी प्रवेश करके युधिष्ठिर के संतस्वभाव और ढुलमुल नीति की आलोचना करते हुए पूर्ण कल्पित कौरव शासन को ही अव्वल बताते है। विदुर और कृपाचार्य देखते हैं, कि बच्चों की भीड़ युयुस्तु पर पत्थर फेंक रही है। वह गूंगा भिखमंगा सैनिक भी, युयुत्सु ने युध्द में जिसके पैर तोड़ दिये थे, प्रतिशोध स्वरूप उन पर पत्थरों से प्रहार कर रहा था। जैसे ही कृपाचार्य प्रहरी के हाथ से भाला लेकर उसका पीछा करते करते, युयुत्सु हाथ से भाला छीनकर आत्महत्या कर लेता है। युयुत्सु की आत्महत्या की सूचना पर टिप्पणी करते हुए प्रहरी आपस में कहते हैं, कि जब तक अस्त्र रहेगें काम आयेंगे ही, फिर भले ही दूसरों की हत्या में प्रयुक्त हो, या आत्महत्या में। कृपाचार्य आत्मघात वाली युधिष्ठिर की संस्कृति से मुक्ति पाने के लिए हस्तिनापुर से प्रस्थान करने का निश्चय करते हैं। इस बीच युधिष्ठिर सूचना देते है कि युयुत्सु में अभी कुछ प्राण शेष है। विदुर युयुत्सु की परिचर्या करते हैं, उधर वन में भीषण अग्निकांड होता है। संजय के बहुत प्रयत्न करने पर भी कुंती गांधारी और धृतराष्ट्र उसी भीषण दावाग्नि में भस्म हो जाते हैं। मरते समय गांधारी को बोध होता है कि जो शाप उसने कृष्ण को दिया था, वही अग्नि आत्महत्या, अधर्म के रूप में परिव्याप्त हो रहा हैं। युधिष्ठिर को अपनी विजय खोखली लगने लगती है, वे किरीट धारण करना छोड़ देते हैं। हस्तिनापुर में अपशकुन का तर्पण करने के उपरांत युयुत्सु के घाव पुनः खुल जाते हैं और उनका आत्मघात फलित होकर रहता है उन्हें कृष्ण के अवसान के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। विदुर के समक्ष हिमालय के शिखरों पर गलकर प्राणान्त करने का निश्चय प्रकट करते हैं।

पांचवे अंक के उपरांत समापन में प्रभु की मृत्यु का प्रसंग है। कवि ने समापन के प्रारम्भ में पूर्व भक्तिभावना से प्रभु की वंदना की है, तदन्तर कथा गायन में अपने दाहिनी जांघ पर मृग के मुख जैसा बांया पग टिकाकर पीपल के नीचे प्रभास वन क्षेत्र में विराजमान कृष्ण का उल्लेख है। भयंकर रूपवाला अश्वत्थामा मदिरा के नशे में डूबे यादव वंशियों के द्वारा अधर्म की तुलना अपने द्वारा किए गए नरसंहार से करने पर भगवान कृष्ण को भी अपनी ही कोटी का अपराधी घोषित करता है। आत्मग्लानि से पीड़ित हो गिरता हुआ आता है। सहसा झाड़ी के पीछे से "जरा" नामक एक व्याध कृष्ण के बाये पैर को मृगमुख समझकर बाण चलाता है। प्रभु के पैर में बाण लगते ही पीप भरा नीला खून बाहर निकलता है। अश्वत्थामा को यह सब देखकर लगता है, जैसे प्रभु ने अपने शोषित से उसकी ही पीड़ा को व्यक्त किया है। उसके मन में आस्था जागती है, युयुत्सु की प्रेतात्मा नर पशु अश्वत्थामा के मन में उसी आस्था का उपहास करती है। वह कृष्ण के प्रति अनास्थ प्रगट करता हुआ कहता है, कि हमारी नियति प्रभु के मरण से नही मानव भविष्य से परिक्षित के जीवन से बंधी है। व्याध के कथन से स्पष्ट होता है, कि प्रभु ने स्वेच्छा से ही मरण को वरण किया है। अश्वत्थामा स्वीकार करता है, अंधायुग अंधी प्रतिहिंसा बनकर मेरी नस नस में बैठ गया था। प्रभु ने शत्रु होते हुए भी मेरी पीड़ा स्वयं धारण कर ली। युयुत्सु ने यह प्रश्न करने पर कि प्रभु के इस कायर मरण के बाद मानव भविष्य रक्षा कैसे होती, बूढा व्याध प्रभु के अंतिम शब्दों को दोहराता है। प्रभु ने कहा था "अब तक मानव भविष्य को मैं जिलाता था, लेकिन अंधे युग में मेरा एक अंश निष्क्रिय (संजय), आत्मघाती (युयुत्सु) और विगलित (अश्वत्थामा) रहेगा, क्योंकि इनका दायित्व अन्य सभी व्यक्तियों को होना होगा, मानव मन के उस वृत्त में निवास करेगा जो, सभी परिस्थितियों का अतिक्रमण करते हुए, पिघल ध्वंसों पर नूतन निर्मीत करेगा। मर्यादा युक्त आचरणनुसार सृजन निर्भयता साहस आदि के क्षणों में बार बारी जीवित हो रहूंगा।" अंत में भरत वाक्य के रूप में कथागायन का प्रयोग किया गया है, जिसमें कवि ने कामना की है कि संजय की निष्क्रियता, अश्वत्थामा

की बर्बरता, प्रहारियों की दासवृत्ति के रूप में युग मानस पर गहरा अंधकार छा जाने के बावजूद हमारे मन में बीज रूप में स्थित वह तत्त्व जो साहस, स्वतंत्रता, नूतन सर्जन दायित्वयुक्त मर्यादित आचारण में अवतरित होता है, हमेशा मानव भविष्य को ब्रह्मास्त्रों के भय, दासता संशय और पराजय से बचाता रहेगा।

अंधायुग (एक अवलोकन) :-

धर्मवीर भारती एक ऐसे नाटककार हैं, जिन्होंने आधुनिकता के बोध को गहरी संवेदना के स्तर पर अनुभूति का विषय बनाया है। आपने देखा कि स्वतंत्र्योत्तर काल के छह सात वर्षों बाद की परिस्थितियों में देश का नागरिक मानसिक विघटन की यातना की पीड़ा भोगने के लिए अभिशप्त बनता चला जा रहा है। व्यक्ति की आशाओं-आकांक्षाओं को घुन सा लग गया है, और नई परिस्थितियों के प्रभावान्तर्गत विषमता की स्थिति दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। आपका ऐसा भी अनुभव हुआ होगा कि इसका बुरा प्रभाव व्यक्ति और व्यक्ति के माध्यम से समाज पर भी पड़ा रहा है। पहले विश्वयुध्द के दुष्परिणामों की भरपाई अभी नहीं हो पाई थी, कि दूसरे महायुध्द ने इस भूलोक के व्यक्ति की आस्था को अनास्था में बदलना आरम्भ कर दिया। परमाणु के विस्फोट एवं भावी आशंकाओं से व्यक्ति अपने अस्तित्त्व को संकट की स्थिति में महसूस करने लगा हैं। दूसरे महायुध्द के उपरांत की परिस्थितियों के संदर्भ में नाटककार धर्मवीर भारती को ऐसी ही संवेदना ने अंधायुग नाटक की रचना की प्रेरणा दी हैं।

महाभारत के युध्द में जो कुछ हुआ और उस समय के सत्ताधारियों ने जो कुछ किया, उसके परिणाम दूसरे विश्वयुध्द के बाद की विभीषिकाओं से बहुत अधिक मेल खाते थे। इसी आलोक में भारती ने महसूस किया कि युध्द व्यक्ति और समाज की नैतिक मान्यताओं का उच्छेद कर डालता है। क्योंकि युध्द के समय केवल अपना स्वार्थ और उस स्वार्थ की पूर्णता सत्ताधारियों के माध्यम

से उत्प्रेरित होकर भारती ने "अंधायुग" नाटक में व्यक्ति के संशय, उसकी स्वार्थ भावना, आनास्था समाज और व्यक्ति के जीवन में न होने वाले मूल्यों के विघटन के मूल कारणों का पता लगाने का प्रयास किया है। जैसा राजा वैसी प्रजा के नियम के अनुसार राजा अगर अंधा है तो प्रजा की दृष्टि भी उसके उसी अंधेपन का शिकार हो जाया करती है। इसी तथ्य की नाटकब में इस प्रकार कहा गया है -

"हम सबके मन में कहीं एक अंध गह्वर है,
बर्बर पशु, अंधा पशु वास वहीं करता है।"[9]

जिस समय किसी राष्ट्र के पास अणु-विस्फोट से विश्व संहार करने की शक्ति आ जाती है, तो उसका विनाशकारी अणुबल सभी की होड का विषय बन जाता है। ऐसी परिस्थितियों में विनाश की लीला से बचने की आशा, दुराशा मात्र बन जाया करती है -

"यदि यह लक्ष्य सिध्द हुआ औ नरपशु।
तो आगे आने वाली सदियों तक
पृथ्वीपर रसमय वनस्पति नहीं होंगी
शिशु होंगे विकलांग और कुंठाग्रस्त
सारी मनुष्य-जाति बौनी हो जायेगी।"[10]

"अंधायुग" के नाटक के कथ्य को अभिव्यक्ति देने वाली संवेदना के माध्यम से नाटककार भारती ने युध्दोत्पन्न मूल्यहीनता, विकृति, कुण्ठा और वैयक्तिक एवं सामूहिक विघटन के लिए आज के मानव को सावधान किया है।[11] नाटक की कथा के अनुसार महाभारत का युध्द अंतिम चरणों में है। लेकिन नाटककार ने नाटक के पहले अंक में ही यह दर्शाया है, कि "कौरव नगरी" के कर्णधार, धृतराष्ट्र आदि उन अंधे व्यक्तियों जैसे हैं, जिनका आचरण ही अंधा बन जाता है, और विवेक और नैतिकता की चेतना उनके आचरण से दूर जा पड़ती हैं।

मनुष्य व्यक्तिगत नैतिकता का जाल अपने चारों ओर बुन लेता है।

"पर वह संसार
स्वतः अपने अंधेपन से उपजा था।
मैंने अपने ही वैयक्तिक सम्वेदन से जो जाना था
केवल उतना ही था मेरे लिए वस्तु जगत्
इन्द्रजाल की माया-सृष्टि के समान

× × × × ×

मेरे मन ने सारे भाव किये थे विकसित
मेरी सब वृत्तियाँ उसी से परिचालित थीं
मेरा स्नेह, मेरी घृणा, मेरी नीति, मेरा धर्म
बिल्कुल मेरा ही वैयक्तिक था।"[12]

और व्यक्तिगत नैतिकता का जाल उसकी विवशता बन जाता है। और इसी विवशता के कारण युध्द को ही स्वार्थ-सिध्दि का एक मात्र सहारा मान बैठता है। युधिष्ठिर का साथ जिस समय विवेक की मर्यादा से गिरा, तभी द्रोणाचार्य (अश्वत्थामा के पिता) का वध हुआ। इस युध्द में दोनों ही पक्षधरों ने नैतिकता का उल्लंघन किया।

"मैंने कहा था दुर्योधन से
धर्म जिधर होगा ओ मूर्ख।
उधर जय होगी।
धर्म किसी ओर नहीं था। लेकिन
सब ही थे, अंधी प्रवृत्तियों से परिचालित
जिसको तुम कहते हो प्रभु
उसने जब चाहा, मर्यादा को अपने ही हित में ढाल डाला।"[13]

सत्य को झूठ के आगे झुकना पड़ा, जब अश्वत्थामा को षडयंत्र रचकर की गई हत्या का पता चला और यह मालूम हुआ कि किस तरह दुर्योधन का भी वध किया गया है, तो उस नैतिक पतन ने अश्वत्थामा को पागल बना दिया।

"मेरे पिता थे अपराजेय
अर्धसत्य से ही
युधिष्ठिर ने उनका
वध कर डाला
उस दिन से
मेरे अंदर भी
जो शुभ था, कोमलतम था
उसकी भ्रूण हत्या
युध्द युधिष्ठिर के
अर्धसत्य ने कर दी
धर्मराज होकर वे बोले
"नर या कुंजर"
मानव को पशु से
उन्होंने पृथक नहीं किया,
उस दिन से मैं हूँ
पशुमात्र, अंध बर्बर पशु।"[14]

वध केवल वध, केवल वध
अंतिम अर्थ बने
मेरे अस्तित्व का।

और अश्वत्थामा ने कूटनीति का रास्ता अपनाया।

आता है, कोई
शायद पांडव योध्दा है
आहा ।
अकेला, निहत्था है
पीछे से छिपकर
इस पर करूंगा वार।[15]

धर्म की युध्दनीति का त्याग कर उसने पांडवों के पक्ष का पशुवत् संहार किया। अश्वत्थामा का यह कथन, कि उस दिन से मेरे अंदर भी, जो शुभ था उसकी भ्रूणहत्या, युधिष्ठर के अर्धसत्य ने कर दी, यहीं प्रमाणित करता है, कि युध्द में दोनों ही पक्ष हर प्रकार की नैतिकता को तिलांजलि दे देते हैं।

अश्वत्थामा के उपर्युक्त कथन और उसका आचरण व्यक्ति की उस मजबूरी को संकेतित करते हैं जो उसकी प्रतिशोध की भावना को जगाती है। जिसकी प्रेरणा से वह विवेक का त्याग कर बर्बर एवं हिंसक रूप धारण कर लेता है।

युयुत्सु (धृतराष्ट्र का पुत्र) की मनोदशा ऐसी है कि उसने इस युध्द में सत्य का मार्ग अपनाया था। लेकिन बाद में युध्द की समूची घटनाओं, स्थितियों और आचरण की जानकारी ने उसे त्रिशंकु की स्थिति में पहुंचा दिया। एक ओर उसे पांडवों की ओर से उपेक्षा मिली, और दूसरी ओर कौरवनगर के लोग भी उसे तिरस्कृत करने लगते हैं। यहाँ तक कि माता गांधारी उस पर व्यंग्य करते हुए कहती हैं -

"बेटा,
भुजाएं ये तुम्हारी
पराक्रम भरी
थकी तो नहीं

अपने बंधुओं का
वध करते - करते?"[16]

तिरस्कार की इस नियति ने उसे धुरीहीन बना दिया। विदुर के सम्मुख उसने अपनी यातना इस प्रकार व्यक्त की है -

"अंतिम परिणति में
दोनों जर्जर करते हैं
पक्ष चाहे सत्य का हो
अथवा असत्य का।
मुझको क्या मिला विदुर, मुझको क्या मिला।"[17]

नाटककार ने वर्तमान युग के आणविक युध्द के भयावह परिणामों को ही प्रधानतया इस नाटक में अभिव्यक्ति दी है। अश्वत्थामा प्रतिशोध की आग में जलता हुआ उत्तरा के गर्भ को नष्ट करना चाहता है, लेकिन कृष्ण वैसा नहीं होने देते। यहाँ तक कि स्वयं कृष्ण भी गांधारी के शाप से मुक्त नहीं हो पाते।

अंत में भारती का नाटककार इसी निष्कर्ष पर पहुंचता है, कि

"सब विजयी थे, लेकिन सब थे विश्वास-ध्वस्त
थे सूत्रधार खुद कृष्ण किन्तु थे, शापग्रस्त।"[18]

युयुत्सु अन्ततः आत्महत्या करता है। इससे यह ध्वनित होता है, कि धर्म के पक्ष का साथ देने वाले व्यकित की दशा, युयुत्सु की हालत से भिन्न नहीं होती। कृष्ण की मृत्यु भी एक प्रश्न हैं। यह प्रश्न यहीं हैं, कि आज भी विश्व में समाज में, संशय और स्वार्थ का राज्य है। मूल्य विघटन की स्थिति बन चुकी है और भविष्य अंधकारमय है। नाटककार का यह कथन कि, "वह कथा ज्योति की है, अंधों के माध्यम से जीवन मूल्यों की आस्था की पैरवी करता है।

पौराणिक मिथक को केवल माध्यम बनाया गया है। इसी माध्यम से अनास्था, संशय समाज और व्यक्ति के विकृत रूपों और विघटित मूल्यों में भटकते, सामाजिक युग का मार्मिक एवं सजीव दृश्य भी प्रस्तुत किया गया है। इसी बहाने नयी संवेदना के संदर्भ में नाटककार ने अंत में आस्था की किरण की ओर स्पष्ट संकेत कर दिया है। अंधायुग वर्तमान युग की विसंगतियों, विकार की ओर उन्मुख, मनोवृत्तियों और टूटते जीवन मूल्यों की ओर संकेत करता है। धृतराष्ट्र राष्ट्र को धारण करने वाले उस शासक के व्यक्तित्त्व का प्रतीक है, जिसने वैयक्तिक सुखलाभ और संतान के मोह एवं निजाहित और स्वार्थ के पक्ष में बैठने वाली नैतिकता और राजनीति का अंधेपन के साथ अपना लिया है। गांधारी का भी यही रूप है, और वह अविवेक-विवेक का आंचल त्यागकर केवल प्रतिशोध और अंधी ममता की गिरफत का शिकार है।

अंधायुग का युयुत्सु आज के उस मानव का प्रतीक है, जिसे हम आज का धुरीहीन, भटकता हुआ व्यक्ति कह सकते हैं। युयुत्सु आज के ऐसे ही मनुष्य की पीड़ा और यातना का रूप है। सत्य के पक्षधर की यही परिणति आज के युग, में भी देखने को मिलती है। युयुत्सु का अंतर्द्वंद हमें वर्तमानयुग की मनुष्य की नियति से परिचित कराता है। व्यक्ति जब कोई लक्ष्य प्राप्त करने के लिए गलत रास्ता अपनाए तो इसका विरोधी भी वही रास्ता अपनाने के लिए अभिशप्त हो जाता है। इसी कारण अश्वत्थामा भी गलत प्रतिशोध के कारण निराशा एवं अंतर्द्वन्द की यातना के लिए अभिशप्त एवं विक्षिप्त बना दिया गया है। अश्वत्थामा के ये शब्द कि -

"वध मेरे लिए नहीं रही नीति वह है,
अब मेरे लिए मनोग्रंथी"

आज के व्यक्ति के इसी जीवन सत्य का साक्ष्य है। कौरव महलों में केवल दो प्रहरी घूमते हैं, जिनके प्रारम्भिक वार्तालाप से कौरव के राज्यनाश एवं कुल नाश

का बोध होता है, तथा इसके साथ ही, वे दोनों अपने निरुद्देश्य जीवन की व्यंजना भी करते हैं। दोनों ही आस्था, साहस, अस्तित्व को निरर्थक प्रमाणित करते हैं। इन प्रहरियों के माध्यम से लेखक ने वर्तमान जीवन में दासवृत्तिग्रस्त जनता की मनोवृत्ति का परिचय दिया है।

अंधायुग के माध्यम से नाटककार ने संकेत दिया है, कि आज के युध्दों के पीछे भी न्याय-अन्याय के समाज में आदमी जितना ही आदर्शवादी अथवा नैतिक मानदंडों को अपनाए उतना ही वह स्वयं को तिरस्कृत महसूस करता है। नाट्क का पात्र युयुत्सु आस्था, विश्वास, श्रध्दा, न्याय सत्य और मर्यादा आदि मानदंडों की जीवन में शरण लेने के उपरांत भी तिरस्कृत होता है। जिसके कारण उसे कृष्ण के विषय में अंत तक कहना ही पड़ता है कि -

"कुछ दिन तक कृष्ण की झूठी आस्था में
ज्योतिवृत्त में भटका,
किन्तु आत्महत्या का शिला द्वार खोलकर
वापस लौटा में अंधी गहन गुफा में
---- जीकर वह जीत नहीं पाया अनास्था की,
करने का नाटक रचकर वह चाहता है,
लांघता हमको
लेकिन में कहता हूँ,
वंचक था, कायर था, शक्तिहीन था, वह
बचा नहीं पाया परीक्षित या मुझको
चला गया अपने लोक।"[19]

नाटक में सामूहिक चिंतन अथवा भलाई की अपेक्षा वैयक्तिक चिंतन की महत्ता स्पष्ट द्रष्टव्य है। धृतराष्ट्र अपने अंधेपन से उत्पन्न ममता और भय के कारण संतान के प्रति इतना ममतामय है, कि उसे वैयक्तिकता के सम्मुख मर्यादा

एवं नीति का मूल्य, दृष्टिगत ही नहीं होता। तभी तो वह कहता है -

"मैने अपने ही वैयक्तिक सम्वेदन से जो माना था
केवल उतना ही था मेरे लिए वस्तु जगत
मेरी सब वृत्तियाँ उसी से परिचालित थीं।
मेरा स्नेह मेरी घृणा, मेरी नीति, मेरा धर्म
बिल्कुल मेरा ही वैयक्ति था
उसमें नैतिकता को कोई बाहय मापदंड था ही नहीं
कौरव जा मेरी मांसलता से उपजे थे
वे ही थे अंतिम सत्य
मेरी ममता ही वहाँ नीति थी
मर्यादा थी।"[20]

"अंधायुग" मे नाटककार के आधुनिक दृष्टिकोण का निरीक्षण करते हुए यही कहा जा सकता है, कि ब्रहमास्त्रों के युग का अणुयुग में अवतीर्णन एक प्रकार से "अंधायुग" पुरावृत्त था पौराणिक आख्यान से नई युध्द संस्कृति के भयावह परिणामों को व्यंजित करने की सफल कृति है। युध्द का उद्भव वैयक्तिक धरातल पर कौरवों और पांडवों के हित के कारण हुआ किन्तु उसका परिणाम सम्पूर्ण युग की भोगना पड़ा। युग ही नहीं, वे व्यक्ति भी उस विनाश में तिरोहित हो गये हैं। उसे अश्वत्थामा के ब्रहमास्त्र छोड़ने के परिणामस्वरूप व्यास का निम्न कथन युग को विनाशय यंत्रों के निर्माण के प्रति चेतावनी देता है।

"बात क्या तुम्हें हैं, परिणाम इस ब्रहमास्त्र का
पृथ्वी पर रसमय वनस्पति नहीं होगी
शिशु होंगे पैदा विकलांग और कुंठाग्रस्त
सारी मनुष्य जाति, बौनी हो जायेगी
जो कुछ भी ज्ञान संचित किया है मनुष्य ने

सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में
सदा सदा के लिए होगा विलीन वह

गेहूँ की बालों में सर्प फुफकारेंगे।
नदियों में वह बहकर आयेगी पिछली आग।"[21]

संदर्भ :-

1. अंधा कुआं - डा.लक्ष्मीनारायण लाल, पृष्ठ 68
2. वही, पृ.99
3. वही, पृ.92
4. वहीं, पृ.70
5. अंधा युग - धर्मवीर भारती, पृ.13
6. वही, पृ.21
7. वही, पृ.40
8. वही, पृ.43
9. वही, पृ.21
10. वही, पृ.93
11. आलोचना (जुलाई-सितम्बर 1967) नेमीचंद्र जैन, पृ.93
12. अंधा युग - धर्मवीर भारती, पृ.16
13. वही, पृ.19
14. वहीं, पृ.29
15. वहीं, पृ.30
16. वही, पृ.45
17. वही, पृ.46
18. वहीं, पृ.105
19. वहीं, पृ.124
20. वहीं, पृ.97-98
21. वहीं, पृ.92-93